स्व–निर्देशित अध्ययन सामग्री
Self-Instructional Learning Material

मास्टर ऑफ आर्ट्स (संस्कृत साहित्य)

एम. ए. (संस्कृत साहित्य)

अन्तिम वर्ष

इतिहास पुराणों का परिचय

(प्रथम प्रश्न पत्र)

दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत शिक्षा केन्द्र
महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय
चित्रकूट, सतना (म.प्र.) – 485334

इतिहास पुराणों का परिचय

संस्करण–2016–17

प्रेरणा एवं मार्गदर्शन :
प्रो. नरेश चन्द्र गौतम
कुलपति
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

लेखक :
डॉ. तुलसीदास परौहा
एसो. प्रोफेसर, संस्कृत विभाग
महर्षि पाणिनि संस्कृत एवं वैदिक विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

संपादक :
डॉ. प्रज्ञा मिश्रा
एसो. प्रोफेसर, संस्कृत विभाग
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.) 485 331

सम्पर्क सूत्र :
निदेशक, दूरवर्ती शिक्षा
दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत शिक्षा केन्द्र
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)
दूरभाष– 07670–265460, इ–मेल– distance.gramodaya@gmail.com, website: www.mgcgvchitrakoot.com

प्रकाशक :
कुलसचिव
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

कापीराइट © : महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट (म.प्र.)

आभार : यह अध्ययन सामग्री संबंधित पाठ्यक्रम और विषय के लिए विशेषज्ञों द्वारा तैयार की गई है। अध्ययन सामग्री को सरल, सुरुचिपूर्ण और बोधगम्य बनाने की दृष्टि से अनेक स्रोतों से प्रेरणा, संदर्भ और सामग्री ली गई है। सभी के प्रति आभार। अध्ययन सामग्री में व्यक्त विचार लेखक के अपने हैं। विश्वविद्यालय का इससे सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

संदेश

महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय की स्थापना मध्यप्रदेश शासन द्वारा एक पृथक अधिनियम से 1991 में सुप्रसिद्ध समाजसेवी पद्मविभूषण नानाजी देशमुख के प्रेरणा और प्रयासों से चित्रकूट में मंदाकिनी के तट पर हुई। विश्वविद्यालय का प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण विकास के लिए आवश्यक मानव संसाधन तैयार करना है। विगत 25 वर्षों की समर्पित सेवाओं में विश्वविद्यालय ने ज्ञान–विज्ञान के विविध आयामों पर अपने शिक्षा, शोध, प्रशिक्षण और प्रसार कार्यों से छाप छोड़ी है।

ग्रामीण क्षेत्र में संसाधनों के अभाव तथा सामाजिक–पारिवारिक परिस्थितियों के कारण निरंतरता से अध्ययन करने में बाधायें आती हैं। विश्वविद्यालय ने इस समस्या के समाधान के लिए गुणवत्तायुक्त दूरवर्ती शिक्षा को प्रत्येक ग्रामीण के घर–आँगन तक पहुँचाने का संकल्प लिया है। विश्वविद्यालय का दूरवर्ती अध्ययन एवं सतत शिक्षा केन्द्र इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सतत् प्रयत्नशील है।

मुझे प्रसन्नता है कि दूरवर्ती शिक्षा के विद्यार्थियों को स्वनिर्देशित अध्ययन सामग्री मुद्रित और व्यवस्थित रूप में पहुँचाये जाने का यह प्रयास न सिर्फ दूरवर्ती शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ायेगा बल्कि छात्रों को गहराई से अध्ययन करने की दिशा में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा।

प्रो. नरेश चन्द्र गौतम
कुलपति

इतिहास पुराणों का परिचय

यूनिट-1 :

इतिहास पुराणों का स्वरूप, रामायण और महाभारत का रचनाकाल तथा काव्य सौन्दर्य

यूनिट-2 :

अष्टादश पुराणों का परिचय

यूनिट-3 :

पुराणों में आख्यान, पुराकथा तथा ऐतिहासिक वृत्त

यूनिट-4 :

पाठ्यग्रन्थ महाभारत - 'नलोपाख्यान'

यूनिट-5 :

विष्णु पुराण - प्रथम पांच अध्याय (प्रथम अंश)

यूनिट – 1

इतिहास पुराण का स्वरूप, रामायण और महाभारत का रचनाकाल तथा काव्य सौन्दर्य

NOTES

पुराण की व्यत्पत्ति :-

पुराण शब्द की व्युत्पत्ति पाणिनि, यास्क आदि निर्वाचकों के अतिरिक्त स्वयं पुराणें ने भी की है। पुरा भवम् (प्राचीन काल में होने वाला) अर्थ में आचार्य पाणिनि पुरा शब्द से ट्यु प्रत्यय का विधान करके तथा निपातनात् तुडागम के अभाव से पुराण शब्द को व्युत्पन्न करते हैं। वहीं आचार्य यास्क पुरा नवं भवति अर्थात् जो प्राचीन होकर भी नया होता है, अर्थ में पुराण का निर्वचन करते हैं। पद्म पुराण के अनुसार ''पुरा परम्परां वष्टि पुराणं तेन तत् स्मृतम्।'' (पद्म05-2-53) अर्थात् जो प्राचीन आर्ष परम्पराओं का व्याख्याताा है, पुराण कहा जाता है। इन व्युत्पत्तियों से स्पष्ट है पुराण का वर्ण्य विषय प्राचीन काल से सम्बन्धित घटनाओं एवं परम्पराओं से है।

इतिहास की व्युत्पत्ति :-

इतिहास शब्द में तीन शब्दों का समास है। इति (इस प्रकार से) ह (निश्चय ही) आस (था/हुआ था) अर्थात् प्राचीन काल में निश्चय रूप से घटित घटनायें इतिहास शब्द द्वारा निदिष्ट हैं। इतिहास का व्युत्पत्ति लभ्य अर्थ प्राचीन काल में घटित घटनाओं का द्योतक है। अथर्ववेद तथा ब्राह्मण ग्रन्थों में इतिहास शब्द पुराण शब्द से भिन्न अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। इससे स्पष्ट है कि काल्पनिक कथा या आख्यान को पुराण नाम से तथा वास्तविक घटनाओं को इतिहास नाम से जाना जाता है।

इतिहास तथा पुराण में पार्थक्य :-

प्राचीन काल में इतिहास तथा पुराण की विभाजन रेखा बहुत धूमिल थी। किन्तु धीरे-धीरे आगे चलकर दोनों अभिधानों का वैशिष्ट्य निश्चित कर लिया गया। छान्दोग्य उपनिषद् (7-1) के भाष्य में आचार्य शंकर ने दोनों में भेद स्पष्टतः दिखाया है। उनका कथन है कि इतिहास तथा पुराण दोनों ही वेदों में उपलब्ध है। उर्वशी तथा पुरूखा के संवाद को सूचित करने वाला उर्वशी हाप्सराः

पुरूखसमैडं चकमे'' आदि शतपथ ब्राह्मण (11-5-1-1) तो इतिहास है परन्तु ''असद्वा इदमग्र आसीत्'' (आरम्भ में असद् ही वर्तमान था जिससे सृष्टि उत्पन्न हुई) इत्यादि सृष्टि प्रक्रिया घटित विवरण पुराण है। इस प्रकार प्राचीन आख्यान तथा आख्यायिका का सूचक भाग इतिहास है तथा सृष्टि प्रक्रिया का वर्णन पुराण है।

NOTES

पुराण का लक्षण :-

पुराण के साथ पञ्च लक्षण का सम्बन्ध प्राचीन तथा घनिष्ठ है। पुराण लक्षण विभिन्न पुराणों में उपलब्ध है। यहां एक प्रख्यात श्लोक तथा विष्णु पुराणोक्त श्लोक द्वारा पञ्च लक्षणोंपर प्रकाश डाला जा रहा है -

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च।

वंश्यानुचरितं चेति पुराणं पञ्चलक्षणम्।।

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशों मन्वन्तराणि च।

सर्वेष्वेतेषु कथ्यत्ते वंशानुचरितं च यत्।। (वि.पुराण 3-6-25)

पुराण की सर्वत्र मान्य परम्परा के अनुसार उक्त पांच विषय वर्णनीय माने गये हैं।

1. सर्ग :- जगत् की तथा उसके नाना पदार्थों की उत्पत्ति अथवा सृष्टि सर्ग कहलाती है।

अव्याकृत गुणक्षोभात् महत स्त्रिवृतोऽहमः।

भूतमात्रेन्द्रियार्थानां सम्भवः सर्ग उच्यते।। (भागवत. 12-7-11)

अर्थात् जब मूल प्रकृति में तीन गुण क्षुब्ध होते हैं तब महत् तत्व की उत्पत्ति होती है। महत्तत्व से तीन प्रकार तामस राजस तथा सात्विक के अहंकार बनते हैं। त्रिविध अहंकार से ही पञ्चतन्मात्रा (भूतमात्र) तथा इन्द्रिय एवं पंचभूतों की उत्पत्ति होती है। इसी उत्पत्ति का नाम क्रम है।

2. प्रतिसर्ग :- सर्ग से विरीत वस्तु अर्थात् प्रलय प्रतिसर्ग कहा जाता है।

नैमित्तिकः प्राकृतिको नित्य आत्यन्तिको लयः।

संस्थेति कविभिः प्रोक्ता चतुर्धास्य स्वभावतः। (श्रीमद्भागवत. 12-7-17)

इस ब्रह्माण्ड का स्वभाव से ही प्रलय हो जाता है, तथा यह चार प्रकार का है- नैमित्तिक,

प्राकृतिक, नित्य तथा आत्यन्तिक। इस प्रलय भेद (चतुर्विध प्रलय) को प्रतिसर्ग कहा जाता है।

3. वंश :- ब्रह्मा जी के द्वारा जितने राजवंशों की सृष्टि हुई, प्रायशः उनकी भूत, भविष्य तथा वर्तमान कालीन सन्तान परम्परा को वंश नाम से पुकारते हैं।

NOTES

राज्ञां ब्रह्म प्रसूतानां वंशस्त्रैकालिकोऽन्वयः। (भागवत. 12-7-16)

भगवान के द्वारा व्याख्यात इस शब्द के भीतर राजाओं की ही संतान परम्परा का उल्लेख प्रधानतया है। परन्तु वंश को राज वंश तक ही सीमित करना अन्याय होगा क्योंकि पुराणों में ऋषि परम्परा का भी वर्णन सुलभ है।

4. मन्वन्तर :- पुराण के अनुसार सृष्टि के विभिन्न काल मान का द्योतक यह शब्द है। मन्वन्तर चौदह होते हैं और प्रत्येक मन्वन्तर का अधिपति एक विशिष्ट मनु हुआ करता है। जिसके सहयोगी पांच पदार्थ और भी होते हैं -

मन्वन्तरं मनुर्देवाः मनुपुत्राः सुरेश्वरः।

ऋषयोंऽशावताराश्च हरेः षड्विधमुच्येत।। (भागवत. 12-7-16)

मनु, देवता, मनु पुत्र, इन्द्र, सप्तर्षि और भगवान् के अंशावतार इन छः विशिष्टिताओं से युक्त समय को मन्वन्तर कहते हैं -

5. वंशानुचरित :- पूर्वोक्त वंशों में उत्पन्न हुए वंशधरों का तथा मूल पुरूष राजाओं का विशिष्ट विवरण जिसमें वर्णित होता है। वह वंशानुचरित कहलाता है -

वंशानुचरितं तेषां वृत्तं वंशधराश्च ये। (भागवत 12-7-16)

पुराणों का रचनाकाल :-

पुराणों की रचना का काल निर्णय एक विषम समस्या है। जिसका समाधान नितान्त कठिन है। इसका कारण अवान्तर शताब्दियों में पुराणों का संस्कार तथा प्रतिसंस्कार माना जाना चाहिये। अत एवं पुराणों के आविर्भावकाल के विषय में इदमित्यं रूप से कहना कठिन है। केवल तारतम्य परीक्षा के द्वारा दो पुराणों के बीच में किसी को इतर पुराणापेक्षया अर्वाचीन अथवा प्राचीन माना जा सकता है।

NOTES

1. ब्रह्मपुराण :- ब्रह्म पुराण अष्टादश पुराणों में प्रथम माना गया है। भारत के सुरम्य क्षेत्रों तथा पुण्य तीर्थों का उल्लेख अद्भुत है। इस पुराण के अनेक तीर्थ विषयक श्लोक (46 अध्याय अध्याय से आगे वाले अंश के) तीर्थ चिन्तामणि में उद्धृत है। इसके लेखक वाचस्पति का समय 1425 ई.-1490 ई. अर्थात् 15वीं शती का उत्तरार्द्ध माना जाता है। फलतः प्रचलित ब्रह्म पुराण की रचना का समय 13वीं शताब्दी मानना उपयुक्त होगा।

2. पद्मपुराण :- पद्म पुराण तथा अभिज्ञान शाकुन्तलम् की शकुन्तला-दुष्यन्त विषयक कथानक समान होने से डॉ. विन्टर नित्स हिस्ट्री आफ इण्डियन लिटरेचर प्रथम भाग पृष्ठ 536-544 में तथा डॉ. हरदत्त शर्मा पद्मपुराण एवं कालिदास नामक पुस्तक में कालिदास को पद्म पुराण का अधमर्ण स्वीकार करते हैं। अर्थात् कालिदास ने यह कथावस्तु पद्मपुराण से ली है, ऐसा मानते हैं। इस प्रकार कालिदास के अभिज्ञान शाकुन्तलम् पर आश्रित होने से स्वर्ग खण्ड का तथा सम्पूर्ण पद्मपुराण की रचना का काल पञ्चम शती से अर्वाचीन ही मानना उचित होगा। यह प्रचलित पद्मपुराण का निर्माण काल है। मूल पद्म पुराण को इससे भी अधिक प्राचीन होना चाहिये।

3. विष्णु पुराण :- विष्णु पुराण आविर्भाव काल के विषय में विद्वानों में विभिन्न मत हैं। योग भाष्टाकार आचार्य वाचस्पति (841 ई.) ने अपनी टीका तत्व वैशारदी में 2-32, 2-52, 2-54 में विष्णु पुराण के श्लोकों को उद्धृत किया है। योगभाष्य में वाचस्पति मिश्र के साक्ष्य पर उद्धृत होने के कारण विष्णु पुराण को प्रथम शती से पूर्व मानना सर्वथा उपयुक्त है।

4. वायु पुराण :- वायु पुराण में गुप्तराज्य के आदिमकाल की राज्यसीमा का उल्लेख किया गया है -

अनुगङ्गं प्रयागं च साकेतं भगधांस्तथा।

एतान् जनपदान् सर्वान् भोक्ष्यन्ते गुप्तवंशजाः।। (वायु पुराण 99-383)

गुप्त राज्य का वायु पुराण कृत उल्लेख समुद्रगुप्त की दिग्विजय से पूर्वकालीन है। फलतः 350ई. से लेकर 550 ई. के मध्य ही इसकी रचना का समय मानना उपयुक्त हो।

5. श्रीमद् भागवत :- आचार्य रामानुज (जन्मकाल 1017ई.) ने अपने वेदान्त तत्वसार में भागवत की वेद स्तुति (10-87) से एकादश स्कन्ध से कतिपय श्लोक उद्धृत किये हैं तथा आचार्य

शंकर ने प्रबोध सुधाकर में अनेक पद्म भागवत की छाया पर निबद्ध किये है। इसी प्रकार शंकराचार्य के गुरू गोविन्द भगवत्पाद तथा उनके गुरू गौडपादाचार्य (सप्तम शती) ने अपने पऽचीकरण व्याख्यान में भागवत से जग्रहे पौरूषं रूपम् (भाग. 1-3-1) श्लोक उद्धृत किया है। जिससे श्रीमद्भागवत की रचना का समय सप्तम शती से पूर्व ही मानना उपयुक्त होगा।

NOTES

6. नारदीय पुराण :- नारदीय की रचना का काल अनुमेय है। नारदीय का एक पद्म (1-9-50) किरातार्जुनीद्यझ (2-30) के पद्म से अत्यधिक समानता रखता है -

अविवेको हि सर्वेषामापदां परमं पद्म्द। (नारद. 1-9-50)

सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमा पदां पदम्द।। (किरात. 2-30)

नारदीय बौ)ों की तीव्र आलोचना करता है। यहां तक कि बौद्ध मंदिरों में प्रविष्ट होने वाले ब्राह्मण के लिए सैकड़ों प्रायश्चित करने के उपरान्त भी निष्क्रति नहीं होती है- ऐसा प्रतिपादित किया है (देखें- नारदीय उत्तरखण्ड 23-41) इस प्रकार इसकी रचना भारवि (षष्ठ शती) तथा बौकाल (सप्तम शती) से अवान्तरकालीन होना चाहिये। फलतः 700 ई. से 900 ई. के मध्य इसकी रचना काल मानना उपयुक्त होगा।

7. मार्कण्डेय पुराण :- यह पुराण प्राचीन पुराणों में अन्यतम माना जाता है। और विषय प्रतिपादन की दृष्टि से पर्याप्त रूप से नवीन तथ्यों का विवरण प्रस्तुत करता है। इसे गुप्तकाल की रचना मानने में किसी प्रकार की विप्रतिपत्ति नहीं है। जोधपुर से उपलब्ध दधिमती माता के शिलालेख में सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये. श्लोक उद्धृत है। इसका समय 289 दिया गया है। जिसे भण्डारकर गप्त संवत् मानते हैं (608 ई.) अतः इस 600 ई. से प्राचीनतर (400-500 ई. के बीच मानना उचित होगा)।

8. अग्निपुराण :- अग्नि पुराण भोजराज के सरस्वती कष्ठाभरण का प्रधान उपजीव्य है। फलतः इसे एकादश शती से प्राचीन होना चाहिये। उधर अग्नि पुराण का अपना उपजीव्य ग्रन्थ दण्डी का काव्यादर्श है (सप्तम शती) अतः अग्नि पुराण का रचनाकाल सप्तम - नवम शती के मध्य में मानना ही सभी चीन होगा।

NOTES

9. भविष्य पुराण :- भविष्य पुराण की रचना का काल निर्धारण अत्यन्त कठिन है, क्योंकि समयानुसार संस्कार एवं प्रति संस्कारों की प्रचुरता तथा नूतन विषयों का संयोजन होता रहा है। वायु पुराण (99-267) नारदीय (1-100) मत्स्य (53-30-31) आदि में इस पुराण का उल्लेख मिलता है। आपस्तम्ब धर्मसूत्र में इसका उद्धरण इसकी प्राचीनता की पुष्टि करता है। इतना ही नहीं अलबरूनी के द्वारा भी इसका उद्धरण प्रचलित भविष्य पुराण का रचनाकाल दशम शती का होना संकेजित करता है।

10. ब्रह्मवैवर्त पुराण :- प्रचलित ब्रह्म वैवर्तपुराण में कृष्ण की अपेक्षा राधा की महिमा का अतिशय वर्णन किया गया है। इतना ही नहीं यह बंगाल की अनेक प्रचलित रीतियो तथा परम्पराओं से परिचयात्मक साम्य रखता है। म्लेच्छात् कुविन्दकन्यायां जोला जातिर्वभूव ह (10-121) राधा की विशद पूजा तथा अनुष्ठान का विस्तृत वर्णन इस पुराण का समय नवम शती से प्राचीन नहीं होना सिद्ध करता है।

11. लिङ्ग पुराण :- लिंग पुराण का विस्तार शैव सम्प्रदाय में हुआ। इस सम्प्रदाय का उदय तो द्वितीय तृतीय शती में हो गया था किन्तु विशेष अभ्युदय सप्तम-अष्टम शती में हुआ। लिङ्ग पुराण के नवम अध्याय में योगान्तरायों का समग्र वर्णन व्यास भाषा से अक्षरशः साम्य रखता है। व्यास भाग्य का समय षष्ठ शतक से कथमपि पूर्वर्ती नहीं है। अतः उक्त प्रमाण लोक में लिङ्ग पुराण का रचनाकाल अष्टम-नवम शती मानना उचित होगा।

12. वराह पुराण :- वराह पुराण वैष्णवता से आमूल आलुप्त है। इसका परिचय रामानुजीय श्रीवैष्णवमत के तथ्यों का विशद प्रतिपादन वैशद्य से प्रतिपादित करता है। नारायण की आदिदेव रूप में प्रतिष्ठा, ज्ञानकर्म का समुच्चय, सृष्टि प्रकार, विष्णु पूजन प्रक्रिया आदि का विवरण रामानुजीय सिद्धान्तों से विपुल साम्य रखता है। अतः इस पुराण का रचनाकाल नवम-दशम शती में मानना उपयुक्त प्रतीत होता है।

13. स्कन्द पुराण :- यह इतना विस्तृत तथा विशाल है कि इसमें प्रक्षिप्त अंशों को जोड़ने के लिये पर्याप्त अवसर है। अतः समय का यथार्थ निरूपण असम्भव ही है। डॉ. हरप्रसाद शास्त्री को नेपाल दरबार लाइब्रेरी में इस पुराण का एक हस्तलेख मिला है, जिसका लेखन सप्तम

शती की शैली में किया गया है। अस्तु इस पुराण की रचनाकाल सप्तम शती से नवम शती के मध्य मानी जा सकती है।

NOTES

14. वामन पुराण :- वामन पुराण तथा कालिदास के कुमार सम्भवम में वर्णित पार्वती तथा वटु का संवाद अक्षरशः मेल खाता है। अनेकत्र छन्द भी समान हैं। शैव होने पर भी वैष्ण मत के साथ किसी प्रकार के विरोध या संघर्ष की भावना नहीं है। अस्तु इसकी रचना कालिदासोत्तर युग 600 ई. से 900 ई. के बीच मानी जा सकती है।

15. कूर्म पुराण :- पाशुपत मत का प्राधान्य होने से यह पुराण षष्ठ-सप्तम शती की रचना है। जब पाशुपत मत का उत्तर भारत में, विशेषतः राजपूताना तथा मथुरा मण्डल में प्राधान्य था। इसके श्लोकों के तथा स्वयं पुराण का उल्लेख विभिन्न स्थानों में मिलता है जो उक्त काला-वधि में रचना काल को पुष्ट करते हैं। पद्म पुराण के पाताल खण्ड में कूर्म पुराण का उल्लेख मिलता है -

ब्रह्महा मद्यपः स्तेनस्त थैव गुरूतल्पगः।

कौर्म पुराणं श्रुत्वैव मुच्यते पातकान्ततः।। (पद्म पुराण 102-42)

16. मत्स्य पुराण :- मत्स्य पुराण में धर्मशास्त्रीय विषयों का बाहुल्य है। इस पुराण ने मनुस्मृति तथा याज्ञवल्क्य स्मृति से भी अनेक श्लोकों को आत्मसात् किया है। कालिदास कृत विक्रमोर्वशीयम्द तथा मत्स्य पुराण के उर्वशी उपाख्यान में आश्चर्यजनक साम्य है, फलतः इसकी रचनाकाल 200 ई. से 400 ई. के बीच मानना चाहिये।

17. गरूड़ पुराण :- गरूड़ पुराणं अग्नि पुराण की भांति ही समस्त उपादेय विद्याओं का संग्रह प्रस्तुत करता है। वाग्भट्ट की अष्टांग हृदय संहिता की विषय वस्तु, चाणक्य प्रणीत राजनीति शास्त्र की विषय वस्तु का साम्य गरूण पुराण से रखता है जिससे उपर्युक्त रचनाओं के आधार पर गरूड़ पुराण नवम शती की रचना होना चाहिये।

18. ब्रह्माण्ड पुराण :- पुराणों में इस अन्तिम पुराण माना गया है। ब्रह्माण्ड राजनीति सम्बन्धणी पारिभाषिक शब्दों का विशेष प्रयोग करता है, जिसमें महाराजाधिराज पदवी महत्व की है।

(दृष्ट्वा जेने रासाद्यो महाराजाधिराजवत् ब्रहमाण्ड 03-22-28) इस शब्द का प्रयोग गुप्त नरेशों ने किया, जिनके करद राजा सामन्त नाम से गुप्तों के अभिलेखों में व्यवहृत है। यह पुराण कान्यकुब्ज के भूप का निर्देश करता है (3-41-32) जो निश्चय ही गुप्त नरेशों के उत्तरकालीन मौरवरि राजा का सूचक माना जा सकता है। अतः इसका रचनाकाल गुप्तोत्तर युग (600 ईस्वी) में माना जा सकता है।

NOTES

पुराण की भाषा :-

अभीष्ट विषय का प्रतिपादन जिस भाषा में और जिस शैली में करने से लेखक के भावों की अभिव्यक्ति होती है, वह उसी भाषा और उसी शैली को अपनाता है। पुराण शब्द प्रधान वेदों से तथा शब्द-अर्थ को गौड़ मानकर अभिव्यञ्जन शैली का मुख्यता मानने वाले काव्यों से भिन्न तथा पृथक् होता है। पुराण अर्थप्रधान होता है अर्थात् अभीष्ट अर्थ को पृथक करने पर ही पुराण का विशेष आग्रह है। इसके निमित्त न वह शब्द का प्राधान्य मानता है, और न रस का, प्रत्युत येन केन प्रकारेण अर्थ के प्रकाशन पर ही पुराण का समग्र बल है। वह न तो प्रभुसम्मित वेद के समान होता है, न कान्तासम्मित तयोपदेशभाजन काव्य के ही सदृश होता है। प्रत्युत इन दोनों से विलक्षण वह सुहृत्सम्मित वाक्य होता है। जिस प्रकार कोई सुहृत् अपने मिश्र की हितचिन्तना से प्रेरित होकर उसे कथा-कहानियों के द्वारा अपने वक्तव्य को हृदयंगम कराता है। इतिहास पुराण भी उसी ढंग से अपना काम कराता है।

पुराण का विशिष्ट रूप किसी वस्तु के वर्णनमात्र से सिद्ध होता है। प्राचीन कथानकों का वर्णन करना तथा उसके माध्यम से श्रोताओं के चित्त को पापात्मक प्रवृत्ति से हटाकर पुण्यात्मक प्रवृत्ति की ओर अग्रसर करना पुराण का मुख्य तात्पर्य है। पुराण का लक्ष्य जन-साधारण के चित्त का आवर्जन कर धर्म की ओर प्रवृत्त कराना है। पुराण इसीलिये सरल-सुबोध, व्यावहारिक चुस्त तथा अल्पाक्षरों में स्वतात्पर्य को प्रकट करती है। वह विशेष पल्लवन का आश्रयण नहीं करती, अपनी धार्मिक प्रवृत्ति को लक्ष्य में रखकर ही उसका सब शब्द व्यापार प्रवृत्त होता है। पुराण अनुरंजन के साथ शिक्षण करता है। वह पाप-पुण्य में विशिष्ट फल को दिखलाकर एक से वर्जन और दूसरे के ग्रहण के लिए उपदेश देता है। परन्तु वेद के समान आदेश नहीं देता। चूंकि पुराणों

की भाषा व्यावहारिक होती है इसीजिए वह पाणिनीय व्याकरण की नियम श्रृंखला को अक्षरशः स्वीकार नहीं करती। पुराण की भाषा की तुलना उस पुण्य सलिला भागीरथी से की जा सकती है, जो अपने मूल प्रवाह पर आग्रह रखती हुई भी इतस्ततः आने वाली जलधाराओं का तिरस्कार नहीं करती। प्रत्युत उन्हें भी अपने में सम्मिलित कर गन्तव्य स्थान तक पहुंचा देती है।

NOTES

पुराण की शैली :-

पुराण की भाषा बड़ी ही सुबोध तथा शैली अत्यन्त हृदयग्राहिणी है। पुराण का मुख्य उद्देश्य जनता के हृदय तक वैदिक तत्वों को पहुंचाना है। वेद के दुरधिगम होने के हेतु ही पुराण का प्रणयन किया गया था। फलतः पुराण को सुखाधिगम होना- सुखपूर्वक अपने अर्थ के प्रतिपादन करने की योग्यता रखना नितान्त आवश्यक है। पुराण में अलंकार का विन्यास भी इसी मूल तात्पर्य को लक्ष्य में रखकर ही किया गया है। यहां अलंकार काव्यगत शब्द के शोभाधायक न होकर काव्यगत अर्थ के ही भूषणादायक हैं।

संसार की अनित्यता तथा परस्पर संयोग-वियोग, जीवन-मृत्यु के अद्भुत दर्शन को पुराण अपनी विशिष्ट शैली में इस प्रकार व्याख्यायित करता है -

यथा हि पथिकः कश्चित् छायामाश्रित्य तिष्ठति।

विश्रम्य च पुनर्गच्छेत् तद्वत् भूत-समागमः।। (पद्म 5-18-338)

अर्थात् जैसे मार्ग पर चलने वाला वटोही पेड़ की छाया में कुछ देर तक विश्राम करता है, फिर उसे छोड़कर आगे चला जाता है, उस पेड़ की छाया का ख्याल भी उसके दिमाग से हट जाता है उसी प्रकार इस संसार यात्रा में मनुष्यों का मिलन क्षणिक तथा क्षणभंगुर है।

इसी प्रकार कर्म के फल को समझाने के लिये किसान से अच्छा उदाहरण और कौन हो सकता है अतः कर्म सिद्धान्त को समझाने के लिए पुराण कृषक को ही उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करता है -

कृषिकारो यथा देवि ! क्षेत्रे बीजं सुसंस्थितः।

यादृशं तु वपत्येव तादृशं फलमश्वुते।। (पद्म 2-7-9)

अर्थात् जैसे कृषक खेत में जैसा बीज बोता है वैसा ही फल प्राप्त करता है। उसी प्रकार जो व्यक्ति जैसा कार्य करता है वह उसी प्रकार उसका फल भी प्राप्त करता है।

NOTES

इस प्रकार जीवन के विभिन्न मर्मों तथा रहस्यों को अत्यन्त व्यावहारिक उदाहरणों द्वारा स्पष्ट करना पुराणों की ही अपनी विशिष्ट शैली है। ऐसी विलक्षण शैली अन्यत्र दुर्लभ है।

रामायण का रचनाकाल :-

बाल्मीकि रामायण की रचना का काला बाह्य तथा अन्तः साक्ष्यों के आधार पर निश्चित किया जा सकता है। श्रीराम वैदिक, बौद्ध तथा जैन धर्मों में समभाव से मर्यादा पुरुषोत्तम माने जाते हैं। बौद्धकवि कुमारलात (100 ई.) की कल्पना-मण्डतिकां में रामायण के सर्वसाधारण में वाचन का उल्लेख है। जैन कवि विमल सूरि ने रामकथा को 'पद्म चरिअ' नामक प्राकृत भाषा के महाकाव्य में निबद्ध किया है। विमल सूरि ने इस काव्य की रचना महावीर की मृत्यु से 530 वर्ष के अन्तर (62 ई.) में की। महाकवि अश्वघोष (78 ई.) ने अपने 'बुद्धचरितम्द' में सुन्दरकाण्ड की अनेक रमणीय उपमाओं और उत्प्रेक्षाओं को निबद्ध किया। बौद्धों के अनेक जातकों में रामकथा का स्पष्ट निदर्शन है। इन बाह्य प्रमाणों के आधार पर रामायण तृतीय शतक ई. पूर्व से भी पहले की रचना सिद्ध होती है।

रामायण का अनुशीलन उसकी रचना के समय को भलीभांति प्रकट कर रहा है। रामायण कालीन राजनीतिक अवस्था का परिचय इस महाकाव्य के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है - पाटलिपुत्र नगर की स्थापना 500 ई. पूर्व में मगध नरेश अजातशत्रु ने की। पहले यह साधारण सा ग्राम पाटलि था। अजातशत्रु ने लोगों के आक्रमण से अपनी रक्षा करने के निमित्त गंगा-सोन के संगम पर इस ग्राम में किला बनवाया। रामायण में राम शोण तथा गंगा के संगम से होकर गुजरते हैं पर पाटलि पुत्र का उल्लेख नहीं मिलता इससे स्पष्ट है कि रामायण 500 ई. पूर्व से पूर्व की रचना है।

बालकाण्ड के अनुसार उत्तरी भारत कोशल, अंग, कान्यकुब्ज, मगध, मिथिला आदि अनेक छोटे-छोटे राज्यों में बंटा था। यह राजनीतिक अवस्था बुद्ध पूर्व भारत में ही दृष्टिगोचर होती है।

इन प्रमाणों के आधार पर हम इसी निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि रामायण की रचना बुद्ध के जन्म के पूर्व हुई। अर्थात् रामायण को 500 ईस्वी पूर्व से पहले की रचना मानना न्याय संगत होगा।

NOTES

रामायण का काव्य सौन्दर्य :-

रामायण का काव्य सौन्दर्य अप्रतिम है। इसमें भाव तथा कला का मंजुल समन्वय दर्शनीय है। भाव पक्ष की दृष्टि में यह काव्य जीवन के स्थायी, मूल्यवान तत्वों, तथ्यों तथा सिद्धान्तों पर आधारित है। मानव जीवन बालू की भीत की भांति शीघ्र ही ढहकर गिर जाने वाली वस्तु नहीं है। उसमें स्थायित्व है। पीछे आने वाली पीढ़ियों को राह दिखाने की क्षमता है और यह सम्भव होता है महनीय शोभन गुणों के कारण, जैसे उदात्तता, अर्थ और काम की धर्मानुकूलता, संकट के समय दीन का संरक्षण, विपत्ति के आघात से प्रताड़ित मानव को अपने बाहु-बल से बचाना, शरणागत का रक्षण आदि। इन्हीं गुणों की प्रतिष्ठा जीवन में स्थायिता तथा महनीयता की जननी होती है।

संस्कृत की आलोचना परम्परा में रामायण 'सिद्ध रस' प्रबन्ध कहा जाता है। कथावस्तु की विवेचना के अवसर पर आनंदवर्धन का यह प्रख्यात श्लोक है -

सन्ति सिद्धरसप्रख्या ये च रामायणादयः।

कथाश्रया न तैयेज्यि स्वेच्छा रसविबोधिनी॥

अभिनव गुप्त की व्याख्या से सिद्ध रस का अर्थ स्पष्टतया झलकता है- सिद्धः आस्वादनमात्र शेषः न तु भावनीयो रसो यस्मिन अर्थात जिसमें रस की भावना नहीं करनी पड़ती प्रत्युत रस आस्वाद के रूप में परिणत हो जाता है। वह काव्य सिद्ध रस है। यथा रामायण। श्रीराम का नाम सुनते ही प्रजावत्सल नरपति, आज्ञाकारी पुत्र, स्नेही भ्राता, विपट्ग्रस्त मित्रों के सहायक बन्धु का कमनीय चित्र हमारे पटल के ऊपर अंकित हो जाता है। जनक-नन्दिनी जानकी का नाम ज्यों ही हमारे श्रवण को रससिक्त बनाता है, त्यों ही हमारे लोचनों के सामने अलोक सामान्य पातिव्रत की मंजूल मूर्ति झूलने लगती है। उनके कथन मात्र से हमारा हृदय आनन्द विभाग हो उठता है। उनसे आनन्द की स्फूर्ति होने के लिये क्या राम के आदर्श चरित्र के अनुशीलन की आवश्यकता पड़ती है। हमारा हृदय रामकथा से इतना स्निग्ध रससिक्त तथा घुलमिल गया है कि हमारे लिए राम और जानकी किसी

अतीत युग की स्मृति न रहकर वर्तमान काल के जीवन्त प्राणी के रूप में परिणत हो गये हैं। इसीलिये रामायण को सिद्ध रस कहा गया है।

NOTES

बाल्मीकि के काव्य की सबसे बड़ी विशिष्टता है- उदात्तता। पात्रों के चित्रण में, प्रसंगों के वर्णन में, प्रकृति के चित्रण में, तथा सौन्दर्य की स्फूर्ति में सर्वत्र उदात्तता स्वाभाविक रूप से विराज रही है। राम के औदार्य का आश्चर्यजनक उदाहरण रावण बधोपरान्त देखने को मिलता है-

मरणान्तानि वैश्राणि निवृत्तं नः प्रयोजनम्।

क्रियतामस्य संस्कारों ममाप्येष यथा तव।। (बाल्मीकि. युद्ध काण्ड)

अर्थात् हे विभीषण ् वैर का अन्त होता है शत्रु के मरण से। रावण की मृत्यु के साथ ही हमारी शत्रुता भी समाप्त हो गयी है उसका दाह संस्कार आदि की क्रिया करो। यह मेरा भी वैसा ही है जैसा कि तुम्हारा।

रामायण में भाव पक्ष का प्राधान्य होने पर भी कला पक्ष की अवहेलना नहीं की गयी है। बाल्मीकि की भाषा उदात्त भावों की अभिव्यक्ति का समर्थ माध्यम है। छोटे-छोटे प्रायः समास विहीन पदों में महर्षि ने बड़े ही सरस तथा सरल शब्दों के द्वारा अपने भावों की अभिव्यंजना की है। श्याान्दी सुषमा की ओर उनका ध्यान सहज ही आकृष्ट हुआ है, आनुप्रासिक शोभा धायक पद्क का एक उद्धरण द्रष्टव्य है -

विनष्ट शीतांबुतुषारपंको महाग्रहग्राह विनष्ट पंकः।

प्रकाशलक्ष्म्याश्रयनिर्मलांको रराज चन्द्रो भगवान् शशांकः।।

महाभारत का रचनाकाल :-

अद्यतन उपलब्ध महाभारत लक्षश्लोकात्मक है। यह स्वरूप हरिवंश को मिलाकर ही पूर्ण होता है। महाभारत के काल निर्णय से समन्धित कतिपय प्रमाण उपस्थित किये जा रहे हैं -

(क) अठारह पवों का यह ग्रन्थ तथा हरिवंश, संवत् 535 और 635 के बीच जाना तथा बाली द्वीपों से विद्यमान थे। कवि भाषा में अनूदित समग्र ग्रन्थ के आठ पर्व- आदि, विराट्, उद्योग, भीष्म, आश्रमवासी, मुसल, प्रस्थानिक और स्वर्गारोहण, बाली में इस समय

उपलब्ध हैं और कुछ प्रकाशित भी हुए हैं। अनुवाद के बीच-बीच में मूल श्लोक भी दिये गये हैं जो महाभारत के श्लोक से मिलते हैं। फलतः संवत् 535 से कम से कम दो सौ वर्ष पूर्व भारत में महाभारत का प्रमाण अंगीकृत था।

NOTES

(ख) गुप्त शिलालेखों में एक शिलालेख (चेदि संवत् 197 विक्रमी 502 = 445 ईस्वी) में महाभारत का उल्लेख 'शतसाहस्त्री संहिता' अभिधान द्वारा किया गया है। अतः उक्त समय से दो सौ वर्ष पूर्व महाभारत को वर्तमान रूप में होना अनुमान सिद्ध है।

(ग) महाकवि अश्वघोष ने अपने 'ब्रज सूची उपनिषद्' में हरिवंश के श्राद्ध माहात्म्य में से सप्तव्याधा दशार्णेषु (हरिवंश 24-20, 21) इत्यादि श्लोक तथा महाभारत के ही अन्य श्लोक (शान्ति पर्व 261-17) पाये जाते हैं। इससे स्पष्ट है कि प्रथम शती से पूर्व ही हरिवंश को मिलाकर वर्तमान महाभारत प्रचलित था।

(घ) महाभारत के शान्ति पर्व 339-100 (नारायणीयोपाख्यान) में विष्णु के दश अवतारों की चर्चा है जिसमें कृष्ण कमे बाद की चर्चा है। अतः बुद्ध के नाम से अनभिज्ञ महाभारत बुद्ध पूर्वयुग की निःसंदिग्ध रचना है।

उक्त प्रमाणों के आलोक में यह स्पष्ट है कि महाभारत का निर्माण बुद्ध के पूर्व युग से सम्बन्ध रखता है। ईस्वी पूर्व पंचम अथवा षष्ठ शती में उसकी रचना हुई।

महाभारत का संक्षिप्त परिचय :-

महाभारत की रचना वेदव्यास द्वारा की गयी है। इसमें कुल एक लाख श्लोक हैं जो अठारह पर्वों में विभक्त है। अठारह पर्व निम्नलिखित हैं - (1) आदि पर्व (2) सभा पर्व (3) वन पर्व (4) विराट् पर्व (5) उद्योग पर्व (6) भीष्म पर्व (7) द्रोण पर्व (8) कर्ण पर्व (9) शल्य पर्व (10) सौप्तिक (11) स्त्री (12) शान्ति (13) अनुशासन (14) अश्वमेघ (15) आश्रमवासी (16) मौसल (17) महाप्रस्थानिक (18) स्वगारोहण।

आदि पर्व में चन्द्रवंश का विस्तृत इतिहास तथा कौरव पाण्डवों की उत्पत्ति का वर्णन है। सभा पर्व में द्यूतक्रीड़ा, वन पर्व में पाण्डवों का वनवास, विराट् पर्व में पाण्डवों का अज्ञातवास

उद्योग पर्व में श्रीकृष्ण का दूत बनकर कौरवों की सभी में जाना तथा शान्ति का उद्योग करना, भीष्म पर्व में अर्जुन को गीता का उपदेश, युद्ध का आरम्भ, भीष्म का युद्ध और शरशय्या पर पड़ना, द्रोण पर्व में अभिमन्युवध, द्रोणाचार्य का युद्ध और वध, कर्ण पर्व में कर्ण का युद्ध और वध, शल्य पर्व में शल्य की अध्यक्षता में लड़ाई और अन्त में बध, सौप्तिक पर्व में पाण्डवों के सोये हुए पुत्रों का रात में अश्वत्थामा द्वारा वध, स्त्रीपर्व में स्त्रियों के बिताया शान्ति पर्व में भीष्म पितामह का युधिष्ठिर को मोक्ष धर्म तथा राजधर्म का उपदेश, अनुशासन पर्व में धर्म तथा नीति की कथायें, अश्वमेघ पर्व में युधिष्ठिर का अश्वमेघ यज्ञ करना, आश्रमवासी पर्व में धृतराष्ट्र, गान्धारी आदि का वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश करना, मौसल पर्व में यादवों का मूसल के द्वारा विनाश, महाप्रस्थाविक पर्व में पाण्डवों की हिमालय यात्रा का वर्णन वर्णित है तथा स्वर्गारोहण पर्व में पाण्डवों का स्वर्ग में जाना वर्णित है।

NOTES

महाभारत का काव्य सौन्दर्य :-

महाभारत इतिहास काव्य के नाम से विश्रुत है। इतिहास प्राचीनकाल की महत्वपूर्ण घटित घटनाओं के माध्यम से आने वाली पीढ़ी का मार्गदर्शक, शिक्षक तथा नियामक की भूमिका का निर्वहन करने का प्रयास करता है। उसका अपना काव्य सौन्दर्य भावपक्ष तथा कला पक्ष के अतिरिक्त विषयवस्तुगत अधिक होता है। इस दृष्टि से महर्षि वेदव्यास ने भारतीय अर्थनीति, राजनीति, अध्यात्मक, व्यवहार शास्त्र आदि के सिद्धान्तों का शिक्षण घटनाओं तथा उपाख्यानों के माध्यम से वही सजीवता के साथ महाभारत में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। वास्तव में महाभारत को भारत के धर्म तथा तत्वज्ञान कविश्वकोश है। धर्म ही भारतीय संस्कृति का प्राण है और इसीलिए व्यास जी ने अधर्म से देश का नाश तथा धर्म से राष्ट्र के अभ्युत्थान की बात बड़े ही सुन्दर आख्यानों के द्वारा सिखलाई है। भारत सावित्री (जो महाभारत की भव्यशिक्षा का सार संकलन माना जाता है) में व्यास की स्पष्ट उक्ति है कि धर्म का परित्याग किसी भी दशा में, भय से या लोभ से कभी भी नहीं करना चाहिये। धर्म शाश्वत है चिरस्थायी है।

न जातु कामान्न भयान्न लोभाद्

धर्मं त्यजेज्जीवन स्यापि हेतोः।

धर्मो नित्यः सुखदुखे त्वनित्ये

जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः।।

NOTES

व्यास कर्मवादी आचार्य हैं। कर्म ही मनुष्य का मुख्य लक्षण है। कर्म से पराङ्मुख मानव वस्तुतः मानव नहीं होता। महाभारत के अश्वमेघ पर्व 43-2) में कहा गया है-

प्रकाश लक्षणा देवा मनुष्याः कर्मलक्षणाः।।

भारतभूमि कर्मभूमि है। फल भोगने का स्थान तो स्वर्ग है। जो इस भूमि को छोड़ने के उपरान्त ही प्राप्त होता है। इस विशाल ब्रहमाण्ड में मनुष्य ही सबसे श्रेष्ठ वस्तु है। जिसको कर्मशील एवं कर्मणा मानव होने तथा मानवता की उपासना में सक्रिय रहने की शिक्षा तथा प्रेरणा महाभारत का विषयगत प्रमुख काव्य सौन्दर्य है। अत्यन्त सरल तथा स्फुट शब्दों में कहीं आलंकारिक प्रयोगों से सुसज्जित महाभारत कलापक्षगत सौन्दर्य से भी वंचित नही है।

रामायण तथा महाभारत की तुलना :-

रामायण एवं महाभारत की तुलना मुख्यतः दो विष्रूायों में की जा सकती है। प्रथम तो उनके वर्णनीय विषय को लेकर और दूसरी उनके रचनाकाल को लेकर। रामायण आदिकाव्य माना जाता है जबकि महाभारत इतिहास कहा जाता है। इस पारम्परिक भेद का यह अभिप्राय है कि रामायण में काव्यगत चमत्कार महत्व की वस्तु है। महाभारत में प्राचीनकाल के अनुक प्रसि) राजाओं के इतिवृत्त का वर्णन करना ही ग्रन्थकार का उद्देश्य है। इसीलिये रामायण में राम रावण युद्ध की घटना सर्वतो भावेन मुख्य है। अन्य छोटे-छोटे कथानक भी हैं किन्तु वे प्रधानवृत्त को पुष्ट करने के लिये ही हैं। उधर महाभारत में प्रधान घटना कौरवों तथा पाण्डवों का युद्ध है पर इसके साथ-साथ प्राचीनकाल की अनेक कथायें अवान्तर रूप से दी हुई है। जो मुख्य घटना से कम महत्व नहीं रखती है।

रामायण एवं महाभारत का भौगोलिक विस्तार भिन्न-भिन्न है। रामायण में जिस भारत वर्ष की चर्चा है उसकी दक्षिणी सीमा विन्ध्य और दण्डक है। पूर्वी सीमा विदेह तथा पश्चिमी सीमा सुराष्ट्र है। परन्तु महाभारत के समय आर्यावर्त का विशेष विस्तार दीख पड़ता है। पूर्वी सीमा गंगा

सागर का संगम है। दक्षिण में चोल तथा मालावार प्रान्तों की सत्ता है। इतना ही नहीं लंका के भी अधिपति उपहार लेकर युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित होते हैं। उत्तर कुरू हिमालय प्रदेश के राजा लोग उपहार लेकर स्वयं यज्ञ में उपस्थित होते हैं। फलतः भारतवर्ष का भौगोलिक विस्तार उस युग में रामायण की अपेक्षा अत्यधिक है।

NOTES

रामायण एवं महाभारत के स्वरूप में भी पर्याप्त अन्तर है। रामायण में एक ही कवि की कोमल लेखनी ने अपना चमत्कार दिखलाया है। कविता में समरसता, शब्द और अर्थ का मंजूल सामन्जस्य है। जिससे यह स्पष्ट है कि इसके रचना का श्रेय किसी एक ही व्यक्ति को है। परन्तु महाभारत के विषय में ऐसा नहीं कहा जा सकता। वह तो अनेक शतान्दियों के साहित्यिक प्रयासों का फल है। धीरे-धीरे अपने अल्प कलेवर से बढ़ता हुआ वह लक्ष श्लोकों वाला विशालकाय ग्रन्थ हो गया। रामायण के लेखक की चर्चा कहीं नहीं है, उसे लव तथा कुश के द्वारा उसके गाये जाने के तथ्य से हम परिचित हैं। परन्तु महाभारत लिपिबद्ध किया गया ग्रन्थ रत्न है। जिसके लिपिबद्ध करने का श्रेय स्वयं श्री गणेश जी को प्राप्त है।

रचनाकाल की दृष्टि से रामायण एवं महाभारत की तुलना विचारणीय प्रश्न है। गत शताब्दी के प्रसिद्ध विद्वान (जर्मनी) डॉ. बेवर ने पहले-पहल यह कहना प्रारम्भ किया कि रामायण की अपेक्षा महाभारत की रचना पहले हुई। रामायण में सुन्दर पद विन्यास तथा सुबोध रचना को वे अर्वाचीनता का परिचायक मानते थे। परन्तु भारतीय परम्परा में डक्त मत के सर्वथा विरूद्ध है। वाल्मीकि आदिकवि और महाभारत के रचयिता वेद व्यास उनके पश्चात् बर्ती कवि हैं। युग के हिसाब से भी अन्तर पड़ता है। दोनों ग्रन्थों के अनुशीलन से भी स्पष्ट पता चलता है कि कालक्रम में बाल्मीकि रामायण महाभारत से पूर्व की रचना है।

यूनिट – 2

अष्टादश पुराणों का परिचय

NOTES

उद्देश्य :-

इस इकाई में अष्टादश पुराणों का सामान्य परिचय तथा महत्व प्रतिपादित किया जा रहा है। जिससे छात्रगण पुराणें में अन्तर्गर्भित ज्ञान की एवं विज्ञान की अपार सम्पदा से परिचित हो तथा उसे अपनी सामर्थ्यानुसार संग्रहीत भी कर सकें। मानवीय मूल्यों के अनुरक्षण तथा पारिवारिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय दायित्वों का नैष्ठिक निर्वहण भारतीय संस्कृति की विशिष्ट विशेषता रही है उसे जानना पुराणों के अध्ययन बिना सम्भव नहीं है, अतएव इस इकाई में हम अष्टादश पुराणों से परिचय कराने का प्रयास करते हैं।

1. ब्रह्मपुराण का परिचय :-

यह पुराण आदि ब्राह्म के नाम से भी प्रसिद्ध है। इसके अध्यायों की संख्या 245 है और श्लोकों की संख्या 14.000 के आसपास है। पुराण सम्मत विषयों का वर्णन यहां उपलब्ध होता है। सृष्टि कथन के अनन्तर सूर्यवंश तथा सोमवंश का अत्यन्त संक्षिप्त विवरण है। पार्वती आख्यान बड़े विस्तार से 10 अध्यायों में (30 अध्याय से 50 अध्याय) दिया गया है। मार्कण्डेय के आख्यान (अध्याय 52) के अनन्तर गौतमी, गंगा, वृत्तिका तीर्थ, चक्रतीर्थ, पुत्रतीर्थ, यमतीर्थ, आपस्तम्ब तीर्थ आदि अनेक प्राचीन तीर्थों के माहात्म्य गौतमी माहात्म्य के अन्तर्गत (अध्याय 70-175) दिये गये हैं। भगवान कृष्ण के चरित्र का भी वर्णन 32 अध्यायों (अध्याय 180 से 212 तक) में बड़े विस्तार के साथ वर्णित है। कथानक वही है जिसका वर्णन भागवत के दशम स्कन्ध में है। मरण के अनन्तर होने वाली अवस्था का वर्णन अनेक अध्यायों में किया गया है। इस पुराण में भूगोल का विशेष वर्णन नहीं है। परन्तु उड़ीसा में स्थित कोणार्क नामक तीर्थ तथा तत्सम्बद्ध सूर्य पूजा का वर्णन इस पुराण की विशेषता प्रतीत होती है। सूर्य की महिमा तथा उनके व्यापक प्रभुत्व का निर्देश छः अध्यायों में (अध्याय 28 से 33) में है। इस पुराण में सांख्ययोग की समीक्षा भी बड़ी विस्तार से दश अध्यायों में (अध्याय 234 से 244) में की गयी है।

2. पद्म पुराण :-

NOTES

यह पुराण परिमाण में स्कन्द पुराण को छोड़कर अद्वितीय है। इसके श्लोकों की संख्या 50. 000 बतलायी जाती है। इसके दो संस्करण उपलब्ध होते हैं- (1) बंगाली संस्करण (2) देवनागरी संस्करण। बंगाली संस्करण तो अब तक अप्रकाशित हस्तलिखित प्रतियों में है। जबकि देवनागरी संस्करण आनन्दाश्रम संस्कृत ग्रन्थावली में चार भागों में प्रकाशित हुआ है। आनन्दाश्रम संस्करण में छः खण्ड है। (1) आदि (2) भूमि (3) ब्रह्मा (4) पाताल (5) सृष्टि और (6) उत्तरखण्ड।

परन्तु भूमिखण्ड के अध्याय 125-48, 49 से पता चलता है कि मूल में पांच ही खण्ड है। जो बंगाली संस्करण में उपलब्ध हैं।

प्रथमं सृष्टिखण्डं हि भूमिखण्डं द्वितीयकम्।

तृतीयं स्वर्गखण्डञ्च पातालञ्च चतुर्थकम्।।

पंचमं चोत्तरं खण्डं सर्वपाप प्रणाशनम्।

अस्तु उक्त खण्डों के आधार पर संक्षेप में ग्रन्थ का परिचय प्रस्तुत है -

(1) सृष्टि खण्ड :- इसमें 82 अध्याय हैं तथा 55000 श्लोक हैं। यह खण्ड पांच पर्वों में विभक्त है। (1) पौष्कर पर्व- इसमें देवता, मुनि, पितर, मनुष्य आदि की सृष्टि का वर्णन है। (2) तीर्थपर्व- इसमें पर्वती, द्वीप तथा सप्तसागर का वर्णन है। (3) तृतीय पर्व में अधिक दक्षिणा दान शील राजाओं का चरित वर्णित है। (4) राजाओं का वंशानुकीर्तिन है। (5) मोक्ष पर्व में मोक्ष तथा उसके साधन का वर्णन किया गया है। इस सृष्टि खण्ड में समुद्र मंथन, पृथु की उत्पत्ति, पुष्करतीर्थ के निवासियों का धर्मकथन, वृत्रासुर संग्राम, वामनावतार, मार्कण्डेय की उत्पत्ति, कार्तिकेय की उत्पत्ति, रामचरित, तारकासुर बध आदि की कथायें सविस्तार वर्णित है।

(2) भूमि खण्ड :- इस खण्ड में शिवकर्मा नामक ब्राह्मण की पितृभक्ति के द्वारा स्वर्गलोक की प्राप्ति का वर्णन, राजा पृथु का चरित, राजा बेन का उन्मार्गगामी होना, सप्तषियों द्वारा वेनबादु मंथन सविस्तार प्रतिपादित है। नाना प्रकार के नैमित्तिक तथा आभ्युदयिक दोनों के अनन्तर सती सुकला की पतिव्रत कथा, ययाति तथा मातलि के अध्यात्म विषयक सम्वाद में पाप और पुण्य के फलों का वर्णन और विष्णु भक्ति की प्रशंसा की गयी है।

(3) स्वर्ग खण्ड :– इस खण्ड में देवता, गन्धर्व, अप्सरा, यक्ष आदि के लोकों का विस्तृत वर्णन है। इसी खण्ड में शकुन्तलोपाख्यान है। जो महाभारत के आख्यान से सर्वथा भिन्न है। परन्तु शाकुन्तलम् से मिलता है।

NOTES

(4) पाताल खण्ड :– इसमें नागलोक का विशेष रूप से वर्णन किया गया है। प्रसंगतः रावण का उल्लेख होने पर सम्पूर्ण रामायण का वर्णन किया गया है। सीता परित्याग, अश्वमेघ यज्ञ आदि की कथायें भी इस खण्ड में वर्णित है। व्यास द्वारा अष्टादश पुराणों की रचना का उल्लेख तथा भागवत की विशेष महिमा का वर्णन भी इस खण्ड का मुख्य अंश है।

(5) उत्तर खण्ड :– इस खण्ड में विविध आख्यानों का संग्रह है। इसमें विष्णु भक्ति की विशेष प्रशंसा की गयी है। क्रियायोग सार नामक इसका एक परिशिष्ट अंश भी है। जिसमें यह दिखलाया गया है विष्णु की पूजन, ब्रत तथा तीर्थों के सेवन से भगवान विष्णु प्रसन्न होते हैं।

(3) विष्णु पुराण :–

विष्णु पुराण अंशों में विभक्त है। जो छः है। अध्याय 126 हैं। प्रथम अंश में सृष्टि प्रक्रिया का वर्णन किया गया है। द्वितीय अंश में आश्रम सम्बन्धी कर्तव्यों का विशेष निर्देश है। इसके तीन अध्यायों में वेद की शाखाओं का वर्णन है। जो वेदाभ्यासियों के लिए बहुत उपयोगी है। चतुर्थ अंश एतिहासिक है। जिसमें सोमवंश के अन्तर्गत ययाति का चरित वर्णित है। पंचम अंश में श्रीकृष्ण का अलौकिक चरित का विशेष वर्णन है तथा षष्ठ अंश में प्रलय तथा भक्ति की विशेष महिमा का वर्णन किया गया है। साहित्यिक दृष्टि से यह पुराण बड़ा रमणीय, सरस तथा सुन्दर है।

(4) वायु पुराण :–

यह पुराण अत्यन्त प्राचीन है। यह अन्य पुराणों से परिमाण में छोटा है। इसके अध्यायों की संख्या केवल 112 है तथा श्लोकों की संख्या 11000 है। इस पुराण में चार खण्ड हैं, जो पाद कहलाते हैं- (1) प्रक्रियापाद (2) अनुषङ्ग (3) उपोद्घात (4) उपसंहार पाद। इसके आरंभ में सृष्टि प्रकरण का सविस्तार वर्णन किया गया है। आश्रम व्यवस्था वर्णन तथा भौगोलिक वर्णन, विशेष रूप से वर्णित है। खगोल वर्णन, युग, यज्ञ, ऋषि, तीर्थ आदि के वर्णन के साथ चतुर्वेदों की

शाखाओं का वर्णन किया गया है। प्रजापति वंश वर्णन, (अध्याय 61 से 65) कश्यपीय प्रजासर्ग (अध्याय 66-69) तथा त्रषि वंश (अध्याय 70) प्राचीन ब्राह्मण वंशों के इतिहास को जानने के लिए बड़े ही उपयोगी है। श्राद्ध का भी वर्णन अनेक अध्यायों में है। अध्याय 86 और 87 में संगीत का निशद वर्णन उपलब्ध है। 99वां अध्याय प्राचीन राजाओं का वर्णन करने से ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसके अनन्तर पाशुपन योग का वर्णन, शार्वस्तव आदि का वर्णन इस पुराण की महत्वपूर्ण विशेषता है।

NOTES

(5) श्रीमद् भागवत :-

यह पुराण संस्कृत साहित्य का अनुपम रत्न है। वैष्णव आचार्य प्रस्थानत्रयी के समान श्रीमद्भागवत को भी अपना उपजीव्य मानते है। श्रीमद् भागवत में कुल 12 स्कन्ध तथा 335 अध्याय हैं। श्लोक संख्या 18000 है। श्रीमद् भागवत का प्रारंभ सूत तथा शौनक के सम्वाद द्वारा होता है। प्रथम स्कन्ध के 19 अध्यायों में श्रीमद् भागवत का शुभारंभ नारद की प्रेरणा से व्यास द्वारा किया जाता है। परीक्षित जन्म तथा उसका राज्यभ्रमण के दौरान कलियुग का निग्रह किया जाना अनन्तर कलियुग द्वारा वास हेतु कतिपय स्थान अभियाचित किये जाने पर निवासार्थ पांच स्थान दिए जाने की घटना का वर्णन है।

अभ्यर्थिनस्तदा तस्मै स्थानानि कलये ददौ।

द्यूतं पानं स्त्रियः सूना राजा धर्मश्चतुर्विधः।।

पुनश्च याचमानाय जातरूप मदात्प्रभुः। (श्रीमद्भागवत 01-17-38)

अनन्तर कलि प्रभाव के कारण ऋषि शाप से अभिशप्त होकर राजा मोक्ष की कामना से श्याुकतीर्थ गंगातट पहुंच जाते हैं।

द्वितीय स्कन्ध में राजा का सृष्टि विषयक प्रश्यन सुनकर शुकदेव का मंगलाचरण पूर्वक सृष्टि प्रक्रिया समझाना चतुःश्लोकी श्रीमद्भागवत का उपदेश तथा पुराण लक्षणों पर सविशद प्रकाश डाला गया है।

तृतीय स्कन्ध में मैत्रेय विदुर संवाद, सृष्टि प्रक्रिया, दशविध सृष्टि का वर्णन, सनकादिकों के शाप से जय विजय का हिरण्याक्ष एवं हिरण्यकशिपु के रूप में कश्यप ऋषि की पत्नी रिति के

गर्भ से उत्पत्ति, हिरण्याक्ष का बाराहरूप विष्णु द्वारा वध, मनुकर्दभ संवाद, कर्दका देवहूति विवाह तथा कविलावतार की कथा का मनोरम वर्णन करते हुए कपिल द्वारा देवहूति को सांख्य योग का उपदेश भी वर्णित किया गया है।

NOTES

चतुर्थ स्कन्ध में मनु कन्याओं का वंश वर्णन, दश यज्ञ, सती देहोत्सर्ग, ध्रुवउपाख्यान तथा बेन चरित वर्णित किया गया है। वेनोपरान्त उसकी भुजाओं के मंथन से प्रकट हुए पृथु तथा अर्चि का महान् जीवन चरित एवं पुरंजन उपाख्यान भी इस स्कन्ध में वर्णित हैं।

पंचम स्कन्ध में प्रियव्रत चरित, जडभरत चरित तथा भूगोल एवं खगोल का विस्तृत वर्णन किया गया है। अन्त में नरक लोकों का वर्णन भी प्रस्तुत किया गया है।

षष्ठ स्कन्ध में अजामिल उपाख्यान, विश्वरूप वध, वृगासुर चरित, चित्रकेतु उपाख्यान एवं पुंसवनव्रत का का रोचक वर्णन किया गया है।

सप्तम स्कन्ध में हिरण्य कशिपु की तपस्या, उसका अधर्माचरण तथा प्रहलाद चरित के माध्यम से नृसिंहावतार की अद्‌भुत कथा वर्णित की गयी है। अन्त में स्त्रीधर्म, आश्रम धर्म, वर्णधर्मादिका उपदेश किया गया है।

अष्टम स्कन्ध में मन्वन्तरानुक्रम कथायें, समुद्र मन्थन बलि का वामनावतार द्वारा निग्रह, बलि को वरदान प्रदान किये जाने की कथा वर्णित है।

नवम स्कन्ध में सूर्यवंशी राजाओं का चरित, मान्धाता, अम्बरीष, सगर, भगरीथ, तथा श्री रामावतार की कथाओं के वर्णन के साथ ही चन्द्रवंशी राजाओं में निमिका चरित, जमदग्नि एवं परशुराम चरित, ययातिचरित, भरतवंश की कथा आदि के उपरान्त यदुवंश की कथायें वर्णित हैं।

दशम स्कन्ध में श्रीकृष्णावतार की अद्‌भुत कथायें उनकी बाल लीला, माखन चोरी लीला, पूतना वध, गोवर्धन लीला, चीरहरण लीला, रास लीला, मथुरा गमन, कंस वध, गुरूकुल गमन, जरासंध युद्ध, द्वारिका गमन, रूक्मणी विवाह सहित अन्य 160108 विवाहों की कथा तथा अनेक लोकोपकारी कार्यों की कथायें दशम स्कन्ध में वर्णित है। सुदामा चरित भी दशम स्कन्ध की मुख्य कथावस्तु है। अन्त में श्रीकृष्णलीलाओं का संक्षेपानुगायन तथा यदुवंश संहार का मुनियों द्वारा

अभिशापित होने की कथा भी दशम स्कन्ध में वर्णित है।

NOTES

एकादश स्कन्ध मे श्रीकृष्ण-उद्धव संवाद, परमार्थ निरूपण, दत्तात्रेय के चौबीस गुरूओं की कथा, यदुवंश का संहार तथा श्रीकृष्ण के परमधाम गमन की अलौकिक कथा वर्णित है।

द्वादश स्कन्ध में कलियुगीन राजाओं का चरित, वेदविभाग, चतुर्विध प्रलयवर्णन, परीक्षित का देह त्याग, सर्पसत्र, मार्कण्डेय चरित तथा अन्त में श्रीमद्भागवत का संक्षेप में अनुस्मरण किया गया है। जिसमें अष्टादश पुराणों के नाम तथा उनकी श्लोक संख्या भी बताई गई है।

(6) नारद पुराण :-

इस ग्रन्थ में दो भाग हैं। पूर्व भाग के अध्यायों की संख्या 125 है और उत्तर भाग में 82 हैं। सम्पूर्ण श्लोकों की संख्या 25000 है। इस ग्रन्थ के पूर्णभाग में वर्ण तथा आश्रम के आचार (अध्याय 24, 25) श्राद्ध (अध्याय 28) प्रायश्चित आदि का विधान वर्णन किया गया है। इसके अनन्तर व्याकरण, विरूक्त, ज्योतिष, छन्द तथा काव्य का निरूपण निरूपित है। विष्णु भक्ति को परम साधन बताने के साथ-साथ राम, हनुमान, कृष्ण, काली, शिव आदि के मंत्रों का विधित् निरूपण किया गया है। अष्टादश पुराणों की बृहद् अनुक्रमणी भी यहां दी गयी है।

(7) मार्कण्डेय पुराण :-

इस पुराण का नामकरण मार्कण्डेय ऋषि के द्वारा कथन किये जाने से हुआ है। परिमाण में यह बहुत छोटा है। इसमें अध्यायों की संख्या 137 तथा श्लोकों की संख्या 9000 है। प्राचीनकाल की प्रसिद्ध ब्रह्मवादिनी महिषी मदालसा का पवित्र जीवन चरित इस ग्रन्थ में विस्तार से प्रतिपादित है। मदालसा ने अपने पुत्र अलर्क को शैशव से ही ब्रह्मज्ञान का उपदेश किया, जिससे उसने राजा होने पर भी ज्ञानयोग के साथ कर्मयोग का अपूर्व सामन्जस्य कर दिखाया। इसी ग्रन्थ का दुर्गा सप्तशती एक विशिष्ट अंश है। जिसमें देवी चरित विस्तार से प्रतिपादित है।

(8) अग्नि पुराण :-

इस पुराण को यदि समस्त भारतीय विद्याओं का विश्वकोष कहें तो किसी प्रकार की अत्युक्ति न होगी। इस पुराण के 383 अध्यायों में नाना प्रकार के विषयों का सनिवेश कम आश्चर्य

का विषय नहीं है। अवतार की कथायें संक्षिप्त कर रामायण और महाभारत की कथायें सविस्तार वर्णित है। मंदिर निर्माण की कला के साथ ही प्रतिष्ठा विधान भी विवेचित है। ज्योतिष शास्त्र, धर्मशास्त्रख व्रत, राजनीति, आयुर्वेद आदि शास्त्रों का वर्णन विस्तार से किया गया है। कोश के विषय में कई अध्याय लिखे गये हैं। अलंकार शास्त्र एवं छन्दः शास्त्र का विवेचन वही रोचकता से किया गया है। व्याकरण तथा दर्शन का भी विवरण प्रस्तुत किया जाना इस पुराण की विशेषता है।

NOTES

(9) भविष्य पुराण :-

इस पुराण के विषय में सर्वाधित संदिग्धता है। इसके नामकरण का कारण भविष्य में होने वाली घटनाओं का वर्णन है। इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि विद्वानों ने समयानुसार उसे परिवर्तित कर दिया अथवा नूतन घटनाओं को जोड़ दिया। नारद पुराण के अनुसार इसके पांच पर्व हैं। (1) ब्राहम पर्व (2) विष्णु पर्व, (3) शिव पर्व (4) सूर्य पर्व और (5) प्रतिसर्ग पर्व।

इसके श्लोकों की संख्या 14000 है। इस पुराण में सूर्य पूजा का विशेष रूप से वर्णन है। कृष्ण के पुत्र साम्ब को कुष्ठ रोग हो गया था जिसकी चिकित्सा करने के लिये गरूड़ शाकद्वीप से ब्राह्मणों को लिवा जाये जिन्होंने सूर्य की उपासना से साम्ब को मुक्त कराया। सूर्योपासना के रहस्य जानने के लिये तथा कलि में उत्पन्न विभिन्न ऐतिहासिक राजवंशों के इतिहास को जानने के लिए यह पुराण नितान्त उपादेय है।

(10) ब्रह्म वैवर्त पुराण :-

इस पुराण के श्लोकों की संख्या 18000 है। इसमें चार खण्ड हैं। (1) ब्रह्म खण्ड (2) प्रकृति खण्ड (3) गणेश खण्ड और (4) कृष्ण खण्ड। इसमें कृष्ण जन्म खण्ड आधे से भी अधिक में है। कृष्ण चरित का विशद वर्णन इसका प्रधान लक्ष्य है। राधा को कृष्ण की पराशक्ति मानकर उसकी सांगोपांग उपासना का विशद वर्णन किया गया है। ब्रह्मखण्ड के तीस अध्यायों में कृष्ण द्वारा जगत् की सृष्टि का वर्णन है तथा आयुर्वेद का भी वर्णन किया गया है। प्रकृतिखण्ड में प्रकृति का वर्णन है। जो भगवान कृष्ण के आदेशानुसार दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती, सावित्री तथा राधा के रूप में अपने के समयानुसार परिणत करती है तथा इस खण्ड में तुसी एवं सावित्री की कथा

सविशद वर्णित है। गणेश खण्ड में गणपति के जन्म, कर्म तथा चरित का वर्णन है। कृष्ण द्वारा ब्रह्म के विवृत में प्रकाशित किये जाने से इसे ब्रह्म वैवर्त कहा गया।

NOTES

विवृतं ब्रह्म कार्त्स्न्येन कृष्णेन यत्र शौनकः।

ब्रह्म वैवर्तकं तेन प्रवदन्ति पुराविदः।। (ब्र.वै. 1-1-10)

(11) लिंग पुराण :-

इसमें भगवान् शंकर की लिंगरूप से उपासना विशेष रूप से दिखलाई गयी है। शिवपुराण में कहा गया है -

लिङ्गस्य चरितोक्तत्वात् पुराणं लिङ्गमुच्यते।।

इस पुराण में 133 अध्याय तथा 11000 श्लोक हैं। इसके दो भाग है। (1) पूर्व भाग और (2) उत्तर भाग। लिंगोपासना की उत्पत्ति के साथ-सृष्टि का वर्णन शंकर द्वारा प्रतिपादित किया गया है। शकर के 28 अवतारों की चर्चा तथा शैव व्रतों को निदर्शन भी किया गया है। उत्तर भाग में पशु, पाश तथा पशुपति की व्याख्या की गयी है। यह पुराण शिवच तत्व की मीमांसा के लिए उपादेय तथा प्रामाणिक है।

(12) वराह पुराण :-

विष्णु ने वराह रूप धारण कर पृथ्वी का पाताल लोक से उद्धार किया है। इस कथा से मुख्यतः सम्बन्ध रखने के कारण इस पुराण का वराह पुराण पड़ा। इस पुराण में 218 अध्याय है। श्लोकों की संख्या 24000 है। इस पुराण में विष्णु से सम्बद्ध अनेक व्रतों का वर्णन किया गया है। विशेषकर द्वादशी व्रत। भिन्न-भिन्न मासों का द्वादशी व्रत का विवेचन तथा उनका विभिन्न विष्णु अवतारों से सम्बन्ध भी प्रतिपादित किया गया है। मथुरा माहात्म्य तथा नचिकेतोपाख्यान भी इस पुराण में मुख्य भागों में से एक है।

(13) स्कन्द पुराण :-

इस पुराण में स्वामी कार्तिकेय ने शैव तत्वों का निरूपण किया है। इसीलिए इसका नाम स्कन्द पुराण है। सबसे वृहतकाय पुराण यही है। इसमें श्लोक संख्या 81000 है। इसमें अनेक

संहितायें, खण्ड तथा माहात्म्य है। इसमें कुछ छः संहितायें है :-

संहिता	श्लोक संख्या
1. सनत्कुमार संहिता	36,000
2. सूत संहिता	6,000
3. शंकर संहिता	30,000
4. वैष्णव संहिता	5,000
5. ब्राह्म संहिता	3,000
6. सौर संहिता	1,000

NOTES

स्कन्द पुराण के विभाजन का दूसरा प्रकार खण्डों में है। जो सात हैं - (1) माहेश्वर खण्ड (2) वैष्णव खण्ड, (3) ब्रह्म खण्ड, (4) काशी खण्ड, (5) रेवा खण्ड, (6) तापी खण्ड और (7) प्रभास खण्ड। संहिताओं में सूत संहिता शिवोपासना के विषय में एक अनुपम खण्ड है। यह संहिता वैदिक तथा तांत्रिक उभय प्रकार की पूजाओं का विस्तार के साथ वर्णन करती है। इस संहिता में चार खण्ड है- (1) शिव माहात्म्य खण्ड- इसमें शिवोपासना तथा शिव महिमा का विशेष प्रतिपादन किया गया है। (2) ज्ञानयोग खण्ड - यह 20 अध्यायों में आचार-धर्मो का वर्णन करने के अनन्तर हठयोग की प्रक्रिया का सांगोपांग विवेचन प्रस्तुत करता है। (3) मुक्ति खण्ड- यह 9 अध्यायों में मुक्ति के उपाय का वर्णन करता है। (4) वैभवखण्ड- यह सब खण्डों में बड़ा है। इसके दो भाग हैं - (1) पूर्व भाग (2) उत्तर भाग। पूर्व भाग में अद्वैत वेदान्त के सि)ान्तों का शैव भक्ति के साथ सम्पुटित कर बड़ा ही सुन्दर आध्यात्मिक विवेचन किया गया है। जबकि उत्तर भाग में ब्रह्मगीता तथा सूत गीता प्रतिपादित है।

सनत्कुमार संहिता :- यह अनेक खण्डों में विभक्त है। इसका प्रथम खण्ड शिव रहस्या कहलाता है। जो पूरी संहिता का आधा भाग है। जिसमें 13000 श्लोक हैं तथा सात काण्ड हैं। (1) सम्भव काण्ड (2) आसुर काण्ड (3) माहेन्द्र काण्ड (4) युद्ध काण्ड (5) देव काण्ड (6) दक्ष काण्ड और (7) उपदेश काण्ड। छठी संहिता सौर संहिता है जिसमें शिव पूजा सम्बन्धी अनेक बातों का वर्णन किया गया है।

सनत्कुमार संहिता :- यह संहिता बीस-बाईस अध्यायों की छोटी सी संहिता है। इन संहिताओं को छोड़कर अन्य संहिताएँ उपलब्ध नहीं होती।

NOTES

अब खण्डों के क्रम से पुराण का परिचय दिया जा रहा है -

(1) माहेश्वर खण्ड :- इसक भीतर दो छोटे-छोटे खण्ड हैं (क) केदार खण्ड और (ख) कुमारिल खण्ड। इन दोनों खण्डों में शिव पार्वती की नाना प्रकार की विचित्र लीलाओं का बड़ा सुन्दर वर्णन किया गया है।

(2) वैष्णव खण्ड :- इस खण्ड के अन्तर्गत उत्कल खण्ड है जिसमें उड़ीसा के जगन्नाथ जी का मन्दिर, पूजा विधान, प्रतिष्ठा तथा तत्सम्बद्ध अनेक उपाख्यानों का वर्णन मिलता है। राजा इन्द्र धुम्न ने नारद जी के उपदेश से किस प्रकार जगन्नाथ जी के स्थान का पता लगाया। इसका विस्तृत वर्णन इस खण्ड में पाया जाता है।

(3) ब्रहम खण्ड :- इसमें दो खण्ड हैं- (1) ब्रह्मारण्य खण्ड (2) ब्रहमोत्तर खण्ड। प्रथम खण्ड में तो धर्मारण्य नामक स्थान के माहात्म्य का विशद प्रतिपादन है। दूसरे खण्ड में उज्जैन में स्थित महाकाल की प्रतिष्ठा तथा पूजन का विशेष विधान है।

(4) काशी खण्ड :- इसमें काशी की महिमा का वर्णन है। काशी के समस्त देवताओं, शिवलिंगों के आविर्भाव तथा माहात्म्य का प्रतिपादन यहां विशेष रूप से किया गया है। काशी का प्राचीन भूगोल जानने के लिए यह आवश्यक है।

(5) रेवा खण्ड :- इसमें नर्मदा की उत्पत्ति तथा उनके तट पर स्थित समस्त तीर्थों का विस्तृत वर्णन मिलता है। सत्यनारायण व्रत कथा भी इसी खण्ड में है।

(6) अवन्ति खण्ड :- अवन्ति उज्जैन में स्थित भिन्न-भिन्न शिवलिंगों की उत्पत्ति तथा माहात्म्य का वर्णन इस खण्ड में किया गया है। महाकालेश्वर का विस्तृत वर्णन भी बहुत विस्तार से किया गया है।

(7) तापी खण्ड :- इसमें नर्मदा की सहायक तापी नदी के किनारे स्थित नाना तीर्थों का वर्णन मिलता है। नारद पुराण के मत से इसके षष्ठ खण्ड का नाम नागर खण्ड है। इसमें नागर

ब्राहमणों की उत्पत्ति का वर्णन है। भारत की सामाजिक दशा जानने के लिये यह आवश्यक है।

(8) प्रभास खण्ड :– इसमें प्रभास क्षेत्र का बड़ा ही विस्तृत वर्णन है, द्वारिका के आसपास का भूगोल जानने के लिए यह खण्ड अत्यन्त उपयोगी है। यह पुराण पण्डितों के लिए विशेष अनुसन्धेय है।

NOTES

(14) वामन पुराण :–

इस पुराण का सम्बन्ध भगवान् वामन के अवतार से है। इसमें 95 अध्याय हैं तथा 10000 श्लोक हैं। विष्णु परक होने के कारण इसमें विष्णु के भिन्न-भिन्न अवतारों का वर्णन होना स्वाभाविक है। परन्तु वामनावतार का वर्णन विशेष रूप से दिया हुआ है। इस पुराण में शिव, शिव का माहात्म्य, शैवतीर्थ, उमा शिव विवाह, गणेश की उत्पत्ति और कार्तिकेय चरित आदि विषयों का वर्णन मिलता है। जिससे पता चलता है कि इसमें किसी प्रकार की साम्प्रदायिक संकीर्णता नहीं है।

(15) कूर्म पुराण :–

इस पुराण से पता चलता है कि इसमें चार संहितायें थी। (1) ब्राहमी संहिता (2) भागवती संहिता, (3) सौरी संहिता और (4) वैष्णवी संहिता। परन्तु आजकल केवल ब्राहमी संहिता ही उपलब्ध होती है जिसे ही वर्तमान में कूर्म पुराण कहा जाता है। भागवत तथा मत्स्य पुराण के अनुसार इसमें 18000 श्लोक होने चाहिये परन्तु उपलब्ध 6000 ही हैं। अर्थात मूल ग्रन्थ का तृतीयांश ही प्राप्त है। विष्णु भगवान ने कूर्म अवतार धारण करके इन्द्रद्युम्न नामक विष्णुभक्त राजा को इस पुराण का उपदेश दिया था। इसीलिये यह कूर्म पुराण के नाम से अभिहित है। इसमें सर्वत्र शिव ही मुख्य देवता के रूप में वर्णित हैं और यह स्पष्ट उल्लिखित है कि ब्रहमा, विष्णु और महेश में कोई भेद नहीं है। ये एक ही ब्रहम की पृथक-पृथक तीन मूर्तियां हैं। इस पुराण में दो भाग हैं। पूर्व भाग में 52 अध्याय तथा उत्तर भाग में 44 अध्याय हैं। पूर्व भाग में सृष्टि प्रकरण के अनन्तर, पार्वती की तपश्चर्या तथा इसके समस्त्रनाम का वर्णन है। इसी भाग में काशी और प्रयाग का माहात्म्य (अध्याय 35 से 37) में दिया गया है। उत्तर भाग में ईश्वर गीता तथा व्यास गीता है। ईश्वर गीता में भगवद् गीता के ढंग पर ध्यान योग के द्वारा शिव के साक्षात्कार का वर्णन है। व्यास गीता में चारों आश्रमों के कर्तव्य कर्मों का वर्णन महर्षि व्यास के द्वारा किया गया है। इस पुराण के उपक्रम से ही पता

चलता है कि मूल रूप में इसमें चार संहितायें थीं।

ब्राहमी भागवती सौरी वैष्णवी च प्रकीर्तिताः।

चतस्त्रः संहिताः पुण्या धर्मकामार्थ मोक्षदाः।।

इयं तु संहिता ब्राहमी चतुवेदैश्च सम्मता।

भवन्ति षट् सहस्त्राणि श्लोकानामत्र संख्यया।। (कू.पु. 01-35)

NOTES

(16) मत्स्य पुराण :-

यह पुराण पर्याप्त रूप से विस्तृत है। इसमें 291 अध्याय तथा 15000 श्लोक हैं। इस पुराण के आरम्भ में सामान्य वर्णन के अनन्तर पितृवंश का वर्णन विशेषरूप से किया गया है। वैराज पितृवंश का 13वें अध्याय में, अग्निष्वान्त पितरों का 14वें अध्याय में, तथा बर्हिषद् पितरों का वर्णन 15वें अध्याय में किया गया है। सोमवंश का वर्णन बड़े विस्तार के साथ यहाँ उपलब्ध है। विशेषतः ययाति चरित का (अध्याय 27 से 42 तक)। अन्य राजन्य वंश भी सविशद प्रतिपादित है। व्रतों का वर्णनन इस पुराण की महती विशेषता है (अध्याय 55 से 102) प्रयाग का भौगोलिक वर्णन तथा महिमा कथन 10 अध्यायों में (अध्याय 103 से 112 तक) किया गया है। भगवान शंकर का त्रिपुरासुर के साथ जो संग्राम हुआ था, उसका वर्णन यहां बड़े विस्तार के साथ (अध्याय 129 से 140) पाते हैं। तारक बध भी सविश्याद प्रतिपादित है। मत्स्यावतार वर्णन के लिए तो यह पुराण लिखा ही गया है। काशी तथा नर्मदा का माहात्म्य वर्णन भी इस पुराण का मुख्य अंश है।

(17) गरूडं पुराण :-

इस पुराण में विष्णु ने गरूड़ को विश्व की सृष्टि बतलायी थी इसीलिए इसका नाम गरूड़ पुराण पड़ा। इसमें 18000 श्लोक हैं और अध्यायों की संख्या 264 है। इसमें दो खण्ड हैं। पूर्व खण्ड कमें उपयोगिनी नाना विद्याओं के विस्तृत वर्णन हैं। आरम्भ में विष्णु तथा उनके अवतारों का माहात्म्य कथित है। इसके एक अंश में नाना प्रकार के रत्नों की परीक्षा है, जैसे मोती की परीक्षा (अ. 69) पद्मराग की परीक्षा (अ. 70) मरकत, इन्द्रनील, वैइर्य, पुष्पराग, करकेतन, भीष्मरत्न, पुलक, रूधिराख्य रत्न स्फटिक तथा विद्रुम की परीक्षा (अ. 71 से 80 तक) क्रमशः दी गई है। राजनीति का भी वर्णन बड़े ही विस्तार के साथ यहां (अध्याय 108 से 115 तक) उपलब्ध होता है।

आयुर्वेद के आवश्यक निदान तथा चिकित्सा का कथन अनेक अध्यायों (अध्याय 150 से 181 तक) में किया गया है। नाना प्रकार के रोगों को दूर करने के लिए औषध व्यवस्था भी यहां (अध्याय 170 से 196) की गयी है। इसके अतिरिक्त एक अध्याय (197) में पशु चिकित्सा का भी वर्णन किया गया है। एक दूसरा अध्याय (अध्याय 199) बुद्धि को निर्मल बनाने के लिये औषध की व्यवस्था करता है। छन्दः शास्त्र के विषय में छः अध्याय (अध्याय 211 से 216) यहां मिलते हैं। सांख्य योग का भी इसमें (अध्याय 230 और 243) वर्णन है। इस प्रकार यह पूर्व अंश अग्नि पुराण की ही भांति समस्त विद्याओं का प्रकाशक माना जाता है।

NOTES

इस पुराण का उत्तरखण्ड 'प्रेत कल्प' कहा जाता है। जिसमें 45 अध्याय हैं। मरने के बाद मनुष्य की क्या गति होती है। मरने के बाद वह किस योनि में उत्पन्न होता है तथा कौन-कौन सा भोग भोगता है ? इसका वर्णन अन्य पुराणों में यत्र-तत्र पाया जाता है किन्तु इस पुराण में इसका विस्तृत वर्णन तथा सांगोपांग वर्णन मिलता है जो अन्यत्र उपलब्ध नहीं होता। इसमें गर्भावस्था, नरक, यम नगर का मार्ग, प्रेतगण का वास स्थान, प्रेत लक्षण, प्रेत योनि से मुक्ति, प्रेतों का रूप, मनुष्यों की आयु, यम लोक का विस्तार, सपिण्डीकरण की विधि, वृषोत्सर्ग विधान आदि विभिन्न विषयों 8का रोचक वर्णन किया गया है। उत्तर खण्ड का जर्मन भाषा में अनुवाद भी हुआ है।

(18) ब्रह्माण्ड पुराण :-

इस पुराण में समस्त ब्रहमाण्ड का वर्णन होने के कारण इसका नाम ब्रहमाण्ड पुराण पड़ा है। भुवन कोष का वर्णन प्रायः हर एक पुराण में उपलब्ध होता है। परन्तु इस पुराण में पूरे विश्व का सांगोपांग वर्णन किया गया है। आजकल उपलब्ध पुराण में, जो बेंकटेश्वर प्रेस बम्बई से प्रकाशित है प्रक्रियापाद तथा उपोद्धात पाद आदि चारों पाद उपलब्ध है। नारद पुराण से पता चलता है कि प्रारंभ में इसमें 12000 श्लोक थे तथा प्रक्रिया, अनुषङ्ग, उपोद्धात तथा उपसंहार नामक चार पाद थे। यथा -

श्रृणु वत्स प्रवक्ष्यामि ब्रहमाण्डांरव्यं पुरातनम्।

यच्य द्वादश सहस्त्र भाविकल्पकथायुतम्म्॥

प्रक्रियाख्योऽनु षङ्गाख्यठ उपोद्धातः तृतीयकः।

चतुर्थ उपसंहारः पादश्चत्वार एव हि।।

NOTES

इस पुराण के प्रथम खण्ड में विश्व के भूगोल का विस्तृत तथा रोचक वर्णन है। जम्बूदीप तथा उसके पर्वत, नदियों का वर्णन अनेक अध्यायों में (अध्याय 66 से 72) है। भद्राश्व, केतुभाल चन्द्रद्वीप, किम्पुरूष, कैलाश, शाल्मलि, कुश, कौम्य, शाक तथा पुष्कर आदि द्वीपों का भिन्न-भिन्न अध्यायों में रोचक वर्णन किया गया है। इसी प्रकार ग्रहों, नक्षत्रों तथा युगों का भी विशेष विवरण इसमें दिया गया है। इस पुराण के तृतीय पाद में भारत वर्ष के प्रसिद्ध क्षत्रिय वंशों का वर्णन इतिहास की दृष्टि से उपादेय है।

इस पुराण को ईस्वी सन् 5वीं शताब्दी में ब्राहमण लोग जावा द्वीप ले गये थे। जहां उसका जावा की प्राचीन भाषा 'कवि भाषा' में अनुवाद आज भी उपलब्ध होता है।

इस प्रकार इस पुराण का समय बहुत प्राचीन है।

अष्टादश पुराण और उनकी श्लोक संख्या
श्रीमद्भागवत के अनुसार

1.	श्री ब्रहम पुराण	-	दस हजार श्लोक
2.	पद्म पुराण	-	पचपन हजार श्लोक
3.	विष्णु पुराण	-	तेईस हजार श्लोक
*4.	वायु पुराण	-	ग्यारह हजार श्लोक
5.	श्रीमद्भागवत पुराण	-	अठारह हजार श्लोक
6.	नारदीय पुराण	-	पच्चीस हजार श्लोक
7.	मार्कण्डेय पुराण	-	नव हजार श्लोक
8.	अग्नि पुराण	-	पन्द्रह हजार चार सौ श्लोक
9.	भविष्य पुराण	-	चौदह हजार पांच सौ श्लोक
10.	ब्रहमवैवर्त पुराण	-	अठारह हजार श्लोक
11.	लिङ्ग पुराण	-	ग्यारह हजार श्लोक
12.	वराह पुराण	-	चौबीस हजार श्लोक

13.	स्कन्द पुराण	-	इक्यासी हजार एक सौ श्लोक
14.	वामन पुराण	-	दस हजार श्लोक
15.	कूर्म पुराण	-	सत्र हजार श्लोक
16.	मत्स्य पुराण	-	चौदह हजार श्लोक
17.	गरूड़ पुराण	-	उन्नीस हजार श्लोक
18.	ब्रहमाण्ड पुराण	-	बाहर हजार श्लोक

*श्रीमद्भागवत के अनुसार नही है। श्रीमद्भागवत में वायु पुराण के स्थान पर शिव पुराण को ग्रहीत किया गया है। जिसकी श्लोक संख्या चौबीस हजार है।

NOTES

यूनिट – 3

पुराणों में आख्यान, पुरा कथा प्रथा ऐतिहासिक वृत्त

NOTES

उद्देश्य :– पुराणों में अनेक उपाख्यान, पुराकथायें तथा ऐतिहासिक वृत्त वर्णित है। जो मनुष्य मात्र को व्यावहारिक तथा आध्यात्मिक शिक्षण के साथ उसे बुरे कार्य छोंड़कर अच्छे कार्यों में संलग्न रहने की प्रेरणा भी प्रदान करते हैं। आख्यान हमारे जीवन के कमजोर पक्षों को सशक्त बनाने में, पथभ्रष्ट होने की स्थिति में सन्मार्ग दिखाने से तथा किंकर्तव्य विमूढ़ता की स्थिति उत्पन्न होने पर विवेकपूर्ण निर्णय लेने की क्षमता भी प्रदान करते हैं। छात्र पुराणों के अध्ययन तथा उपाख्यानों के मनन से उक्त लाभ प्राप्त कर सकें यह सोचकर इस यूनिट में उपरोक्त विषय को सविस्तार प्रतिपादित किया जा रहा है।

पुराणों में आख्यान, पुराकथा तथा ऐतिहासिक – एक औचित्य

पुराणों में प्रतिपादित आख्यान, पुराकथायें तथा ऐतिहासिक वृत्त पुराणों के अनिवार्य तत्व हैं। इनके बिना पुराण साहित्य का रचनोद्देश्य पूर्ण नहीं हो सकता। इस संदर्भ में विष्णु पुराण में कहा गया है –

आख्यानश्चाप्युपाख्यानैर्गाथाभिः कल्पशुद्धिभिः।

पुराणसंहिता चक्रे पुराणार्थविशारदाः।। (विष्णु पुराण 3-6-15)

अर्थात् पुराण के अर्थ ज्ञाता महर्षि वेदव्यास ने आख्यान, उपाख्यान, गाथा तथा कल्पशुद्धि से पुराणों की रचना की है। उक्त उपकरण भूत आख्यानादि पर प्रसंगानुसार प्रकाश डालना उपयुक्त होना –

आख्यान तथा उपाख्यान :–

इन शब्दों के अर्थ के विषय में पर्याप्त मतभेद है। परन्तु यह निश्चित है कि ये दोनों कथानक के अर्थ को लक्षित करते हैं। परन्तु किस प्रकार के कथानक को ? इसमें वैभत्य है। उक्त श्लोक (विष्णु. 3-6-15) की टीका में श्रीधर स्वामी ने एक (प्राचीन) श्लोक उद्धृत किया है –

स्वयं दृष्टार्थकथनं प्राहुराख्यानकं बुधाः।

श्रुतस्यार्थस्य कथन भुपाख्यानं प्रयक्षते।।

यह श्लोक दोनों में पार्थक्य स्पष्ट करता है। आख्यान है स्वयं दृष्ट अर्थ का कथन (अर्थात् ऐसे अर्थ का प्रकाशन जिसका साक्षात्कार स्वयं वक्ता ने किया है।) इसके विपरीत उपाख्यान होता है। अर्थात् श्रुत अर्थ का कथन।

NOTES

इस विवेचन के अनुसार रामोपाख्यान, नचिकेतोपाख्यान आदि द्वारा अभिति श्रीराम की कथानक तथा नचिकेता का कथानग उपाख्यान है। कतिपय विद्वान् आख्यान तथा उपाख्यान में आकार को आधार मानकर भेद करते है, अर्थात् जो कथानक वृहदाकार है वह आख्यान, तथा जिसका स्वरूप स्वल्पाकार है वह उपाख्यान है। इसीलिए सम्पूर्ण महाभारत आख्यान भी कहा जाता है -

अनाभ्रित्यदेमाख्यानं कथाभुवि न विद्यते।। (महा. आदि पर्व 2-37)

गाथा :-

प्राचीन साहित्य में- वेद, ब्राहमण, उपनिषद तथा पुराण में अनेक प्राचीन पद्य अपलब्ध होते हैं। जिनके कर्ता के नाम का पता नहीं रहता। वह किसी मान्य महीपति की स्तुति में लिगी गई रहती है और उसके किसी असामान्य शौर्य अथवा दान का माहात्म्य प्रतिपादित करती है। पुराणों में ऐसी गाथायें राजवर्णन में विशेषतः श्रीमद्भागवत के नवम स्कन्ध में उसी रूप में उपलब्ध है।

इस प्रकार आख्यान तथा उपाख्यान यहां तक कि स्वयं गाथा भी पुराकथा तथा ऐतिहासिक वृतों पर ही आधारित है अतः आख्यान एवं उपाख्यान के माध्यम से पुराणों का अनुशीलन इस यूनिट में (इकाई) किया जा रहा है।

पुराणों में वेदार्थ का उपवृंहण :-

पुराण में वेदार्थ का उपवृहण है। उपवृंहण श्याब्द का अर्थ है - किसी तथ्य की पुष्टि करना तथा उसका विस्तार करना। वृंह धातु का मुख्य अर्थ वर्धन ही तो है। फलतः वेद के मन्त्रों द्वारा प्रतिपादित अर्थ का, सिद्धान्त का, तथा तथ्य का विस्तार पुराणों में किया गया है।

आचार्यो ((मन्त्रद्रष्टा ऋषियों) का कथन है कि वेद मन्त्रों के रहस्य को समझने के लिए

पुराणों का अनुशीलन करना चाहिये क्योंकि अल्पश्रुत व्यक्ति से वेद भगवान् भय करते हैं कि कहीं यह व्यक्ति मेरे रहस्य को जानकर मंत्रों का गलत अर्थ करके मुझमें प्रहार कर सकता है -

NOTES

इतिहास पुराणाभ्यां वेदं समुपवृंहयेत्।

बिभेत्यल्यश्रुताद् वेदों मामयं प्रहरिष्यति।।

यही कारण है कि श्रीमद्भागवत महापुराण अनेकत्र स्वयं को वेदार्थ का प्रतिपादक स्वीकार करता है। भागवत ने अपने को निगम कल्पवृक्ष का गलित, सुपरिपक्व, अतएव मधुरतम फल माना है। (निगमकल्प तरोर्गलितं फलम्द - (1-1-3)

वैदिक आख्यानों का पौराणिक उपवृंहण :-

वैदिक साहित्य में प्रसंगानुसार अनेक आख्यान स्थान-स्थान पर विभिन्न देवताओं के स्वरूप विवेचन के समय वर्णित है। इन आख्यानों का पर्याप्त उपवृंहण पुराणों में किया गया है। इन आख्यानों को दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है - धार्मिक और लौकिका धार्मिक आख्यानों के भीर प्रजापति तथा विष्णु द्वारा अनेक रूपों के धारण करने की बात बहुशा उपवर्तित है। तो लौकिक आख्यानों में किसी विशिष्ट राजा का वृत्त, ऋषि का चरित्र या कोई अलौकिक लोक-रंजन, प्रणय कथा संक्षिप्त रूप में कहीं विस्तृत रूप में विवृत है। इन समस्त आख्यानों के सूक्ष्म वैदिक संकेतों की पुराणों ने वैशद्य के साथ व्याख्या की है। यह व्याख्यण पद्धति पुराण की प्रकृति के सर्वथा अनुकूल है। पुराण का प्रणयन लोक-समाज की सुलभ शैली में गम्भीर वैदिक तत्वों का लोक प्रिय उपदेश देने के निमित्त ही किया गया है। वेदों के आख्यानों को पुराणों ने एक विशिष्ट तात्पर्य तथा उद्देश्य की सिद्धि के लिए ही परिवृंहित किया है। वेदों में प्रजापति के ही नानारूप धारण करने का उल्लेख मिलता है। वैदिक आख्यानों, धार्मिक तथा लौकिक पिमय प्रसि) आख्यान, पुरावृत्त आदि का उपस्थान किया जा रहा है :-

1. मत्स्य आख्यान :-

प्रजापति के द्वारा मत्स्य रूप धारण का आख्यान शतपथ ब्राहमण (2-8-1-1) में संक्षेप रूप से दिया गया है। जलाप्लावन से सम्बन्ध इस कथा का सम्बन्ध पूर्व अध्याय में अभिव्यक्त किया गया है। इस कथा का उपवृंहण पुराणों में अनेकत्र मिलता है। श्रीमद् भागवत के अष्टमस्कन्ध के

चौबीसवें अध्याय में मत्स्यआख्यान विशदतया उपलब्ध है। जिसके अनुसार ब्रहमाजी के द्वारा निर्मित सृष्टि के ब्राहम नामक नैमित्तिक प्रलय काल में समुद्र अपनी सीमायें लांघकर समस्त पृथ्वी को जलाप्लावित कर देता है। भगवान ब्रहमा के निद्रावशीभूत हो जाने से इनका समस्त ज्ञान (वेद) हयग्रव नामक असुर हरण कर लेता है तब भगवान् विष्णु मत्स्य का अवतार धारण करते हैं। उस काल में सत्यव्रत नामक एक राजा रहता था जो अत्यन्त तपस्वी था। एकबार राजा जब नदी में प्रातःकालीन सूर्यार्ध्य दे रहा था तभी उसकी अंजलि में एक मछली आ जाती है वह उसे बार-बार जल में छोड़ता है तथा वह मछली बार-बार अंजलि में आ जाती है। राजा को वह मत्स्य अपनी रक्षा के लिये प्रार्थना करता है। राजा उसे घर में लाकर एक छोटे से जलपात्र में छोड़ देते हैं। देखते ही देखते वह मत्स्य बड़ा रूप धारण कर लेते हैं। राजा ने उसे क्रमशः बड़े पात्रों में रखा परन्तु वह शीघ्र ही बड़ा होता चला गया। अन्त में राजा से उसे समुद्र में छोड़ा तथा प्रार्थना कि आप मत्स्य रूप में कौन हैं ? तब मत्स्यावतारी भगवान् विष्णु ने उसे अपना परिचय दिया। राजा ने उनकी स्तुति की तथा मत्स्यावतार का कारण जानना चाहा तब श्री विष्णु ने कहा- राजन् आज से सातवें दिन सम्पूर्ण पृथ्वी जलाप्लावित हो जायेगी। तब तुम सम्पूर्ण औषधियों, समस्त अन्न बीजों को लेकर सप्तर्षियों के साथ नौका में आरूढ़ हो जाना। मैं तुम्हें मत्स्य रूप में मिल जाऊँगा तुम मेरी सींग में नौका बांध देना अनन्तर में तुम्हारी रक्षा करने के साथ ही वेदों का पारमार्थिक ज्ञान भी प्रदान करूंगा। राजा से वैसा ही किया। मत्स्यावतारी हरि ने राक्षस का वध करके समुद्र में विरण किया। राजा ने उनकी सींग पर चौका बांध दी तथा दुर्लभ ज्ञान प्राप्त किया। उसके अन्तर्गत वेदों, पुराण संहिताओं, इतिहास तथा अनेक विद्याओं का उपदेश श्रीविष्णु ने किया।

यह आख्यान श्रीमद्भागवत के अतिरिक्त अग्निपुराण (2-49) गरूड़ पुराण (1-142) पद्म पुराण (5-4-73) महाभारत शान्तिपर्व अध्याय 340 आदि में भी वर्णित है।

पुरूरवा - उर्वसी आख्यान :-

पुरूरवा उर्वसी का आख्यान ऋग्वेद के विख्यात आख्यानों में अन्यत्तम है। मूलतः यह स्वल्पकाय है। परन्तु पुराणों में इसका अतिरंजना के साथ उपवृंहण है। विष्णु पुराण (4-6) ने चन्द्रवंश के आरम्भ के प्रसंग में पुरूरवा का आख्यान बड़े ही विस्तार तथा वैशद्य के साथ एक पूरे

NOTES

अध्याय में दिया गया है। हरिवंशर (1-26) में भी यह वर्णित है। श्रीमद्भागवत के एक पूरे अध्याय (9-14) में ऐलोपाख्यान के अवसर पर इस आख्यान का सुन्दर वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

NOTES

यथा -

ततः पुरूरवा जज्ञे इलायां य उदाहृतः।

तस्य रूपगुणौदार्य शील द्रविण विक्रमान् ।। 9-15

श्रुत्वोर्वशीन्द्र भवने गीयमानान् सुरर्षिणा।

तदन्तिम भुपेयाय देवी स्मरशरार्दिता।। 9-16

चन्द्रवंश में उत्पन्न बुध पुत्र पुरूरवा अत्यन्तर सुन्दर तथा उच्चगुणों वाला राजा था। उसके सुन्दरता एवं गुणों की कीर्ति देवलोक तक में थी। एक बार देवललोक की राजसभा में सभासदों द्वारा महाराज पुरूरवा के रूपौदार्य की चर्चा को उर्वशी ने सुना। वह मन ही मन पुरूरवा से प्रेम कर बैठी तथा एक दिन वह पृथ्वी लोक पुरूरवा के निकट पहुंची। दोनों का प्रणय संभोग की चरम परिणति तक पहुंचा। राजा द्वारा उर्वशी के गर्भ से छ-पुत्र उत्पन्न हुए। जिनके नाम थे- आयु, श्रुतायु, सत्यायु, रय विजय और जय। जब उर्वशी राजा को छोड़कर देवलोक जाने को उद्यत होती है तब राजा अत्यधिक दुःखी होता है। तब उसे झिड़कती हुई उर्वशी कहते हैं कि स्त्रियों का कोई मित्र नहीं होता वह वृक (भेड़िया) की भांति निर्दयी हृदय होती हैं। स्त्रियां अकरूण, क्रूर, दुर्मर्ष तथा प्रिय साहसी होती हैं। वह स्वार्थ साधन हित पति, भाई इत्यादि की भी शत्रु बन सकती हैं।

मा मृथाः पुरूषोऽसि त्वं मास्य त्वाघुर्वका इमे।

क्वापि सख्यं न वै स्त्रीणां वृकाणां हृदयं यथा। 9-36

स्त्रियों ह्यकरूणाः क्रूराः दुर्भर्षाः प्रिय साहसाः।

घ्नन्त्यल्यार्थेऽपि विश्ववधं पति भ्रातरमप्युत।। 9-37

वस्तुतः स्त्रियों के सम्बन्ध में कही गयी उक्त बातें स्वैरिणी (वेश्या) स्त्रियों के लिए है। उक्त आख्यान काम-लोलुपता से बचने की शिक्षा देता है।

गोकण का आख्यान अथवा पुराकथा :-

NOTES

पद्म पुराण के उत्तरखण्ड में श्रीमद्भागवत या हात्म्य प्रसंग में गोकर्ण की पुराकथा वर्णित है। ऋषि कुमारों द्वारा नारद को श्रीमद्भागवत कथा सुनाये हजाते समय माहात्म्य प्रसंग में यह आख्यान वर्णित हुआ है। ऋषि कुमार कहते हैं -

अत्र ते कीर्तियिष्यामि इतिहासं पुरातनम्।

यस्य श्रवण मात्रेण पापहानिः प्रजायते।। (पद्म. उत्तर. 4-15)

आख्यान का स्वरूप इस प्रकार है :-

तुंग भद्रा नामक नदी के किनारे किसी नगर में आत्मदेव नामक ब्राहमण रहता था। उसकी धुन्धली नामक पत्नी थी। उसे पुत्र की महती लालसा थी परन्तु पचासवर्ष की अवस्था हो जाने पर पुत्र वही हुआ। उसने अनेक धार्मिक उपाय किये परन्तु असफल रहा। अन्त में वह मरने का निश्चय करके जंगल जाता है, जहां उसे एक सरोवर के तट पर सन्यासी से भेंट होती है, उनके सामने अपना दुःख निवेदित कर मरने को उद्युत हो जाता है। सन्यासी उसे एक फल देता है तथा पत्नी को खिलाने का निर्देश करता है। आत्मदेव पत्नी धुंधली को फल देकर खाने की आज्ञा देता है किन्तु धुंधली उस फल को अपनी बहन की सलाह पर गाय को खिला देती है तथा स्वयं गर्भिणी होने का नाटक करती है। समयानुसार धुंधली की बहन के संतान उत्पन्न हो जाती है जिसे धुंधली अपना पुत्र बताती है। उधर गाय के भी एक बालक हो जाता है आत्मदेव अत्यधिक प्रसन्न हो जाता है। दोनों बालक बड़े होने लगते हैं, जिसमें गाय से उत्पन्न बालक गोकर्ण महाज्ञानी होता है तथा धुंधली पुत्र धुंधकारी महान दुष्ट एवं नीच।

कियत्कालेन तौ जातौ तरूणौ तनयावुभौ।

गोकर्णो महाज्ञानी धुधुकारी महाखलः।। (पद्म.उ. 4-66)

धुंधकारी वेश्यानुगामी होकर उन्हीं से मुत्यु प्राप्त करता है। गोकर्ण भाई की मुक्ति का प्रयास करता है तथा श्रीमद्भागवत की कथा का श्रवण कराकर उसे मोक्ष प्रदान कराने में सफल रहते हैं।

यह आख्यान व्यक्ति द्वारा स्वकृत कर्मों के सुपरिणाम एवं दुष्परिणाम के अनिवार्य भोग भोगने की मानवीय विवशता के साथ-साथ श्रीमद्भागवत के महान् वैशिष्ट्य को प्रतिपादित करता है।

NOTES

पुरञ्जन का आख्यान अथवा पुरातन इतिहास :-

पुरञ्जन का आख्यान श्रीमद्भागवत में विस्तार से वर्णित है। यह आख्यान चतुर्थ स्कन्ध के 25 से 29 अध्यायों में सविस्तार वर्णित है। राजा प्राचीनवर्हि, जो एक कर्मकाण्डी तथा तांत्रिक उपासक है, को महाराज नारद जी पुरञ्जन उपाख्यान जैसे आध्यात्मिक आख्यान से भक्तिमार्ग एवं अहिंसक यज्ञादि में नियोजित करने के लिए तथा आत्मतत्व को उपाख्यान के माध्यम से समझाने के लिए प्रस्तुत आख्यान सुनाते हैं -

अत्र ते कथयिष्येऽमुभितिहासं पुरातनम्।

पुरञ्जनस्य चरितं निबोध गदतो मया।। (श्रीमद्भागवत 4-25-9)

पुरञ्जन नाम का एक राजा था। जिसके एक मित्र था उसका नाम था अविज्ञात। दोनों में अपार स्नेह था। एक दिन पुरञ्जन अविज्ञात को छोड़कर पृथ्वीलोक का भ्रमण करने आ पहुंचा। घूमते घूमते हिमालय के दक्षिण में एक नव द्वार का सुन्दर नगर दिखाई दिया। जो समस्त उपेक्षित सुख-संसाधनों से सुसज्जित था। तभी कहीं से घूमकर आती हुई एक सुन्दरी स्त्री उसे मिल जाती है। दोनों आपस में आकृष्ट होते हैं। स्त्री अपना परिचय पुरञ्जनी के रूप में देती है। दोनों का गन्धर्व विवाह हो जाता है। अनेकों वर्षों तक दोनों भौतिक भोगों में डूबे रहते हैं। कालान्तर में चण्डवेग नामक गन्धर्व 365 सिपाहियों के साथ पुरञ्जन के पुर में आक्रमण कर देता है। पुरञ्जन के सैनिक (एकदश भटऋ तथा पांच फनों वाला एक सर्प लड़ते हुए हार का सामना करते हैं। पुरंजन टूट चुका होता है तभी कालकन्या जरा एवं उसका भाई प्रज्वर आ धमकते हैं तथा वह बलात् पुरंजन के साथ विवाह कर लेती है। मृत्यु का समय आने पर पुरंजन अपनी पत्नी पुरंजनी की चिन्ता करता हुआ मर जाता है। ''अन्ते यथा मतिः तथा गतिः'' सिद्धान्तानुसार पुरञ्जन का जन्म स्त्री के रूप में होता है। वह मलयध्वज नामक राजा से विवाहित हो जाती है। शत्रु राजा के साथ युद्ध करते हुए पति के मारे जाने पर वह अर्धरात्रि में पति के पार्थिव देह पर शोक प्रकट करती है तभी अविज्ञान (पुरञ्जन का

सखा) आता है तथा अपना वास्तविक परिचय देता है। पुरञ्जन का मोह समाप्त हो जाता है और उसका मोक्ष हो जाता है।

NOTES

वस्तुतः यह कथा (पुरातन इतिहास या आख्यान) आध्यात्मिक है। पुरञ्जन जीव का तथा पुरञ्जनी बुद्धि का प्रतीक है। नव द्वारों का नगर यह मानव शरीर ही है। पुरञ्जनी क अभिरक्षा में संलग्न पांचफण का सर्प पांच प्राण तथा एकादश भट मन सहित इन्द्रियों के प्रतीक हैं। चण्डवेग, संवत्सर (365 निदात्मक) का प्रतीक तथा उसके 365 सिपाही 365 दिनों के अववोधक हैं। चण्डवेग के साथ पुरञ्जन का युद्ध जीवन के सतत्क्षरण अथवा आयुख्य क्षरण का बोधक है तथा काल कन्या जरा बुढ़ापा का प्रतीक है जो न चाहने पर भी जीव से विवाह करती ही है। प्रज्वर बुढ़ापे में हमेशा बया रहने वाला बुखार है। अन्त में अविज्ञात से मुलाकात होना जीव से ईश्वर के मिलन तथा माया-मोह से मुक्त होकर मोक्ष का परिचायक है।

ध्रुव आख्यान :-

ध्रुव आख्यान प्राचीन पौराणिक इतिहास अथवा पुरी कथा है। ध्रुव आख्यान का वर्णन पुराणों में (विष्णु पुराण, श्रीमद्भागवत आदि, अनेकत्र प्राप्त होता है। श्रीमद्भागवत महापुराण के चतुर्थ स्कन्ध के अष्टम अध्याय से दशम अध्याय तक ध्रुव आख्यान सविस्तार प्रतिपादित है।

आख्यान इस प्रकार है :-

श्री ब्रहमा द्वारा मैथुनी सृष्टि करने के लिये उनकी ही भुजाओं से मनु एवं शतरूपा का जन्म हुआ। मनु के दो पुत्र हुए प्रियव्रत एवं उत्तानपाद। उत्तानपाद की दो पत्तियां थी सुरूचि एवं सुनीर्ति। सुरूचि से उत्तम तथा सुनीति से ध्रुव नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। एक बार महाराज उत्तानपाद सुरूचि के साथ राज्यासन पर आसीन थे। उत्तम उनकी गोद में खेल रहा था। तभी सुनीति पुत्र ध्रुव राजा की गोद में बैठने को मचलने लगा। यह बात सुरूचि को उचित नहीं लगी उसने ध्रुव को झिटकते हुए कहा- यदि तुम राजा की गोद में बैठने की इच्छा करते हो तो तुम्हें मेरी कोख से जन्म लेना होगा तथा उसके लिए तुम्हें परमात्मा को प्रसन्न कर वर मांगना होगा ताकि तुम्हारी इष्ट सिद्धि हो सके।

न वत्स नृपतेर्धिष्ण्यं भवानारोढुमर्हति।

न गृहीतो मया यत्वं कुक्षावपि नृपात्मजः।। 11।।

बालोऽसि बत नात्मान भन्यस्री गर्भ सम्मृतम्।

कनं वेद भवान् यस्य दुर्लभेदर्थे मनोरथः।। 12।।

तपसा राध्य पुरूषं तस्यैवानुगृहेण मे।

गर्भे त्वं साधयात्मानं यदीच्छसि नृपासनम्द।। 13।। (श्रीमद्भागवत 4-8-11 से 13)

माता सुरुचि की बातों से व्यथिक होकर ध्रुव सुनीति से सारी घटना सुनाता है। माता सुनीति परमात्मा की आराधना करने की सलाह देती है। ध्रुव अर्धरात्रि में घर छोड़कर जंगल चले जाते हैं, मार्ग में नारद जी से भेंट होती है। श्री नारद ऋषि ईश्वर की उपासना की विधि तथा अष्टाक्षर मंत्र (ओम् नमो भगवते वासुदेवाय) का उपदेश करते हैं। बालक ध्रुव अभूतपूर्व अत्यन्त कठिन तपस्या प्रारंभ करता है। वह एक महीने तक केवल तीन-तीन के अन्तराल में कपित्थ का फल खाते है। दूसरे माह में छः दिनों के अन्तराल में केवल सूखे पत्ते खाते हैं। तीसरे महीने नव दिनों के अन्तराल में केवल जल पीकर तपस्या करते हैं। चतुर्थ मास में बारह दिनों के अन्तराल में केवल वायु भक्षण करते हैं। पंच मास में जितश्वास लेकर एक पैर में खड़े होकर अष्टाक्षर मंत्र का जप प्रारंभ करते हैं। छठवां मास प्रारंभ होने पर प्रकृति में बिचलन उत्पन्न हो जाता है। अनन्तर ध्रुव की तपस्या से प्रसन्न होकर विष्णु दर्शन देते हैं। ध्रुव भगवान् की अत्यन्त मनोरम स्तुति करते हैं। भगवान् पृथ्वीलोक का 36000 वर्षों के लिए राज्यभोग तथा अन्त में ध्रुवीलोक का वरदान देते हैं। ध्रुव चरित हमें ईश्वर पर अनन्य प्रेम, समदर्शिता, उत्तम मानवीय गुण अपनाने तथा सत्य में ध्रुव होने की शिक्षा देता है।

कूर्म आख्यान :-

कूर्म का आख्यान तैत्तिरीय आरण्यक (1-23-3) रातपथ ब्राहमण (7'5-1-5) तथा जैमिनीय ब्राहमण 3-272 में संक्षिप्त रूप से दिया गया है। कूर्म को प्रजापति का ही स्वरूप बतलाया गया है। पुराण कूर्म को भगवान् विष्णु का द्वितीय अवतार मानकर इस आख्यान की विस्तृत व्याख्या करते हैं। द्रष्टव्य भागवत (8-7) कूर्म पुराण (1-16-77ए 78) अग्नि पुराण (4, 49) गरूड़ पुराण (1-142) पद्म पुराण (5-4 तथा 5-13) ब्रहमपुराण अध्याय 180 तथा विष्णु पुराण (1-4)।

प्रजापति को वराह रूप धारण की कथा का संकेत तैत्तिरीय संहिता (--1-5-1) तथा शतपथ ब्राहमण (14-1-2-11) में उपलब्ध होता है। परन्तु यह कथा ऋग्वेद में भी उल्लिखित है। ऋग्वेद के अनुसार विष्णु ने सोमपान कर एक शत महिषों को तथा क्षीरपाक को ग्रहण किया, जो वास्तव में 'एमुष' नामक वराह की सम्पत्ति थे। इन्द्र ने इस बराह को भी मार डाला। शतपथ के अनुसार इसी एमुष बराह ने जल के ऊपर रहने वाली पृथ्वी को उठा लिया था। तैत्तिरीय संहिता पृथ्वी को उठाने वाले इस वराह को प्रजापति का रूप मानती है। इसी कथा का उपवृंहण वराह अवतार के प्रसंग में पुराणों में किया है। द्रष्टव्य विशेषतः भागवत (3-13-35, 30) विष्णु पुराण (1-4-32, 36) आदि।

NOTES

नचिकेतोपाख्यान :-

नचिकेता का उपाख्यान तैत्तिरीय ब्राहमण तथा कठोपनिषद् में पर्याप्त रूपेण विस्तृत है तथा विद्वज्जनों में विश्रुत है। इस आख्यान का उपवृंहण इतिहास (महाभारत) तथा पुराण (वराह) में विशेष रूप से मिलता है। साथ ही साथ परिवर्तित परिस्थिति में मूल तात्पर्य का समयानुसारी परिवर्तन भी करके आख्यान में रोचकता तथा समयानुकूलता दोनों का सामञ्जस्य प्रस्तुत किया है। इस कथा के विकाश का गम्भीर ऐतिहासिक अनुशीलन परिशिष्ट रूप में यहां प्रस्तुत किया जाता है।

इतिहास (महाभारत) में नचिकेतोपाख्यान :-

महाभारत अनुशासन पर्व के 71वें अध्याय में समग्र नचिकेतोपाख्यान प्राचीन इतिहास के रूप में वर्णित है। नचिकेता के पिता उद्दालक ऋषि ने दीक्षा के समाप्त होने पर नचिकेता को नदी तीर से समिधा, दर्भ, पुष्प, कलश जल लेने के लिए भेजा। किन्तु नदी के वेग से सब कुछ बह गया था। अतः लौटकर बालक नचिकेता ने पिता से कह दिया कि उसे वहां कुछ दिखाई नहीं पड़ा। यह सुन भूख प्यास से आर्त ऋषि ने नचिकेता को शाप दे दिया- यम के पास जा। ऋषि के इस अतर्कित वारवज्र से आहत नचिकेता गतसत्व होकर सद्यः भूलुष्ठित हो गया। दुखित पिता ने शेष दिन तथा रात को अत्यन्त दुःखी होकर बिताया।

पिता के अश्रु से सिक्त नचिकेता पुनः उठा तथा आश्चर्य चकित पिता ने नचिकेता से यमराज की पुरी का वृतान्त पूछा। नचिकेता ने कहा- अत्यन्त प्रकाशमान वैवस्वती सभा में जाने पर यम ने अर्ध्यादि से मेरा स्वागत किया और कहा कि तुम्हारे पिता ने केवल यमपुरी देखने के लिए कहा है अतः तुम मरे नही हो। मैंने उनसे पुण्यवानों के लोक देखने की इच्छा प्रकट की, जिसे उन्होंने दिखाया। दूध और घी से भरी नदियों को देखकर मैंने यम से पूछा -

NOTES

क्षीरस्यैताः सर्पिषश्चैव नद्यः

शश्वत् स्रोताः कस्य भोज्याः प्रदिष्टाः।

अर्थात दूध और घी से भरी ये नदियां किसी भोज्य हैं। यम ने कहा -

मोदव्रवीद् विद्धि भोज्यास्त्वमेता

ये दातारः साधवो गोरसानाम्।

अन्ये लोकाः शाश्वताः वीतशोकैः

समाकीर्णा गोप्रदाने रतानाम्द।। (महा. अनु. 71-29)

यह ने गोदान की प्रभूत प्रशंसा की। गोदन के प्रसंग में पात्र, काल और गोविशेष की भी महिमा वर्णित है। शोभन समय में, शोभन विधि से, शोभन पात्र को दी गई गौ दाता को अनन्त दिव्य लोकों को देती है। हीन और पुरानी गौ देने पर दाता को नरक ही देती है -

दत्वा धेनुं सुव्रतां कांस्यदोहां

कल्याणवत्साम पलायिनीं च।

यावन्ति रोमाणि भवन्ति तस्या

स्रावद् वर्षाण्यश्वुते स्वर्गलोकम्द।। 33।।

इस पद्य द्वारा गोदान की प्रशंसा की गई है। गांवों के साथ मानवों का प्रेम सदा से रहा है। इसका प्रतिपादक यह श्लोक देखिये -

गावो लोकांस्तारयन्ति क्षरन्त्यो

गावश्चान्नं सञ्जनयन्ति लोके।

यस्तं जानन् न गवां हार्दमेति

सवै गन्ता निरयं पापचेताः।। (महाभारत अनु. 71)

इस प्रकार सम्पूर्ण अध्याय में वैवस्वत यम ने गोदान का गौरव तथा महत्व बताया है।

NOTES

पुराणों में नचिकेतोपाख्यान :-

वराह पुराण में अध्याय 193 से 212 तक नचिकेतोपाख्यान वर्णित है। वहां इस कथा को 'पुरावृत्ता कथैषा' कहा गया है। जिससे इसकी प्राचीनता सिद्ध होती है। वहां इस आख्यान की महिमा भी वर्णित है -

श्रृणु राजन् पुरावृतां कथां परम शोभनाम्द।

धर्मवृद्धिकरीं नित्यां यशस्यां कीर्तिवर्धिनीम्द॥

पावनं सर्वपापानां प्रवृतौ कीर्तिवर्धिनीम्द।

इतिहास पुराणानां कथां वै विदुषां प्रियाम्द।। (वराह पुराण 193-10, 11)

212वें अध्याय के अन्त में कथा समाप्ति के अवसर पर भी इसका महत्व प्रतिपादित है -

इदं तु परमाख्यानं भगवद् भक्तिकारकम्द।

श्रृणुयाह श्रावयेद वापि सर्वकामानवाप्नुयात्।। (वराह. 212-20, 21)

वराह पुराण के अनुसार कथा का स्वरूप इस प्रकार है -

उद्दालक नामक कोई प्रसिद्ध ऋषि थे, जो समस्त वेद-वेदांग में पारंगत थे। उनके पुत्र नचिकेता हुए और वे भी अत्यन्त बुद्धिमान तथा समस्त वेद वेदांग में पारंगत थे। पिता ने रुष्ट होकर पुत्र को शाप दिया- जाओ शीघ्र यम को देखो। योग विधि के ज्ञाता पुत्र ने पिता से कहा- आपका वचन मिथ्या न हो इसलिए मैं शीघ्र ही धर्मराज की पुरी में जाऊँगा। यम का दर्शन कर निःसंदेह यहां पुनः आ जाऊँगा। क्रोध में ऋषि ने नचिकेता को शाप दे दिया पर पीछे उन्हें बहुत पश्चाताप हुआ, अतः उन्होंने पुत्र को यमपुरी जाने से बहुत रोका। किन्तु नचिकेता ने भावी पुत्रनाश की आशंका से सन्त्रस्त पिता को सत्यमार्ग से विचलित देखकर उन्हें सत्यमार्ग से न हटने के लिए बहुत प्रयत्न किया। सत्य ही महिमा के प्रतिपाकद ये श्लोक अत्यन्त उदान्त हैं -

NOTES

उदधिलङ्घयेन्नैव मर्यादां सत्यपालितः।

मन्त्रः प्रयुक्तः सत्येन सर्वलोक हिताय ते।।

सत्येन यज्ञा वर्तन्ते मन्त्र पूताः सुपूजिताः।

सत्येन वेदा गायन्ति सत्ये लोकाः प्रतिष्ठिताः।।

सत्यं गात्ति तथा साम सर्व सत्ये प्रतिष्ठितम्द।

सत्यं स्वर्गश्च धर्मश्च सत्यादन्यन्न विद्यते।।

सत्यने सर्व लभजते यथा तात भया श्रुतम्द।

न हि सत्यमतिक्रम्य विद्यते किञ्चिदुत्तमम्द।। (वराह पुराण 193-38 से 41)

पिता को अपने धर्म पर स्थिर कर नचिकेता उस परम स्थान पर गया, जहां राजा यम रहते हैं। उन्होंने बालक को आया देख यथाविधि अर्चना कर तुरन्त लौटा दिया-

आर्चितास्तु यथान्यायं दृष्ट्वैव तु विसर्जितः।।

नचिकेता वहां से लौटकर अपने पिता को आनन्दित करते हुए अपने आश्रम में आया। पुत्र को लौटा देख अपने भाग्य की उद्दात्मक प्रशंसा करने लगे और परलोक की कथा सुनने की इच्छा वाले अन्य ऋषि-मुनियों को बुला लिया। आश्रम में इकट्ठे उन लोगों ने यमलोक विषयक अनेक कौतूहलोत्पादक प्रश्नों को पूछा (अ. 194) यहां से लेकर 212 अध्याय तक नचिकेता ने उन लोगों के प्रश्नों का उत्तर देकर उन्हें सन्तुष्ट किया। परलोक विषयक जिज्ञासुओं के लिए यह अध्याय उपयोगी है। 195वें अध्याय में यमलोकस्य पापियों और 196वें अध्याय में धर्मराज की नगरी का विस्तृत वर्णन है। जहां 'पुष्रूपोदका' नामक नदी बहती है। उसके तट पर ऊँचे प्रासाद हैं, जो दर्शकों के मन को मुग्ध कर लेते हैं। 198वें अध्याय में यमकृत नचिकेता की अभ्यर्थना वर्णित है। कुशास्तृत, पुष्पशोभित स्वर्ण आसन पर यम की आज्ञा से नचिकेता बैठे। यम का रौद्र मुख उस समय सौम्य हो गया। बालक नचिकेता ने उनकी प्रशस्त स्तुति की। जिससे प्रसन्न होकर यम ने उन्हें चित्रगुप्त के पास भेजा। नचिकेता को चित्रगुप्त ने विविध नगर यातनाओं का दर्शन कराया। इन सबका नचिकेता ने अपने पिता के सामने यथावत वर्णन किया।

यूनिट – 4

पाठ्य ग्रन्थ महाभारत "नलोपाख्यान"

NOTES

उद्देश्य :-

महाभारत के वन पर्व के अन्तर्गत 52वें अध्याय से 79वें अध्याय पर्यन्त अर्थात् 27 अध्यायों में नल का उपाख्यान वर्णित है। महाभारत की अपनी विशिष्ट शैली में लिखा हुआ नल का आख्यान राजा नल के उस असामान्य मानवीय गुणों से हमें परिचित कराता है जिन सबका प्रत्येक मनुष्य में होना न केवल अभीष्ट है बल्कि अनिवार्य है। ईश्वर ने मनुष्य की रचना करने के बाद उसे अनेक सामाजिक एवं राष्ट्रीय दायित्व सौंपे हैं तथा अपेक्षा की है वह सही अर्थों में मनुष्य बनकर अपने दायित्व का निर्वहण करेगा। राजा नल एवं उसकी पत्नी दमयन्ती का व्यक्तित्व भारतीय संस्कृति के अनुरूप महान् है। इसे पाठ्य अंश में सम्मिलित करने से निश्चित रूप से हमारे किशोर/नवयुवक छात्रगण नल एवं दमयन्ती के व्यक्तित्व से अभिप्रेरित होंगे।

नलोपाख्यान से प्रमुख श्लोकों का हिन्दी अनुवाद :-

1- राज्यमेव परं धर्म क्षत्रियस्य विदुर्वुधाः।
स क्षत्रधर्मविद् राजा या धर्म्यान्नीनशः पथः।। (52-15)

अर्थ- विद्वानों ने राज्य को ही क्षत्रिय का सर्वोत्तम धन माना है। आप क्षत्रिय धर्म के ज्ञाता नरेश हैं। धर्म के मार्ग से विचलित न होइये।

2- निकृत्या निकृति प्रज्ञा हन्तत्वा इति निश्चयः।
न हि नैकृतिकं हत्वा निकृत्या पाप मुच्यते।। (52-22)

अर्थ- शठता करने या जानने वाले शत्रुओं को शठता के द्वारा ही मारना चाहिये। यह एक सिद्धान्त है। जो स्वयं दूसरों पर छल कपट का प्रयोग करता है, उसे छल से भी मार डालने में पाप नहीं बताया गया है।

3- यत्वभाभाषसे पार्थ प्राप्तः काल इति प्रभा।
अनृतं नोत्सहे वक्तुं न ध्येतन्मम विद्यते।। (52-38)

अर्थ- हे वीर कुन्ती पुत्र ! भीम ! तुम जो यह कहते हो कि सुयोधन के वध का अवसर आ गया है। वह ठीक नहीं है। मैं (युधिष्ठिर) झूठ नहीं बोल सकता क्योंकि मेरी यह आदत नहीं है।

NOTES

4- आसीद् राजा वलो नाम वीर सेन सुतो बली।

उपपत्रो गुणैरिष्टै रूपवानश्वकोविदः।। (53-01)

अर्थ- वृहदश्व ने कहा- धर्मराज ! निषध देश में वीरसेन के पुत्र नल नाम से प्रसिद्ध एक बलवान् राजा हो गये है। वे उत्तम गुणों से सम्पन्न, रूपवान और अश्व संचालन की कला में कुशल थे।

5- दमयन्ती तु रूपेण तेजसा यशसा श्रिया।

सौभाग्येन च लोकेषु यशः प्राप सुमध्यमा।। (53-10)

अर्थ- सुन्दर कटि प्रदेश वाली दमयन्ती रूप, तेल, यश, श्री और सौभाग्य के द्वारा तीनों लोकों में विख्यात यशस्विनी हुई।

6- अतीव रूप सम्पन्ना श्रीरिवायत लोचना।

न देवेषु न यक्षेषु तादृगर रूपवती क्वचित्।। (53-13)

अर्थ- दमयन्ती लक्ष्मी की भांति अत्यन्त सुन्दर रूप से सुशोभित थी। उसके नेत्र विशाल थे। देवताओं और यक्षों में भी वैसी सुन्दरी कन्या कहीं देखने में नहीं आती है।

7- नलश्च नरशाईलो लोकेष्वप्रतिमं भुवि।

कन्दर्प इव रूपेण मूर्तिमान्-अभवत् स्वयम्द।। (53-15)

अर्थ- नरश्रेष्ठ नल भी इस भूतल में मनुष्यों में सबसे सुन्दर थे। उनका रूप देखकर ऐसा जान पड़ता था, मानों नल के आकार में स्वयं कामदेव ही मूर्तिमान् है।

8- असंशयं महाबाहो हनिष्यसि सुयोधनम्द।

वर्षात् त्रयोदशाउर्ध्व सह गाण्डीवधन्वना।। (52-37)

अर्थ- युधिष्ठिर ने भीम से कहा- हे महाबाहु भीम ! इसमें कोई संदेह नहीं है। तेरह वर्ष बीत जाने

के उपरान्त गाण्डीवधारी अर्जुन निश्चित रूप से दुर्योधन का बध करेगा।

9- दमयन्ति नलो नाम निषधेषु महीपतिः।

अश्विनोः सदृशो रूपे न सभास्तस्य मानुषाठ।। (53-27)

NOTES

अर्थ- राजकुमारी दमयन्ती ! सुनो (हंस ने कहा) निषध देश में नल नाम से प्रसिद्ध एक राजा है। जो अश्विनी कुमारों की भांति सुन्दर है। मनुष्यों में तो उनके समान कोई है ही नहीं।

10- दृष्टवन्तो न चास्माभिर्दृष्टपूर्वस्तथाविधः।

त्वं चापि रत्न नारीणां नरेषुच नलो वरः।।

अर्थ- हंस ने दमयन्ती से कहा- हे सुन्दरि ! हमारी दृष्टि में अब तक उनके जैसा कोई भी पुरूष अब तक पहले नहीं देखा गया है। तुम रमणियों में रत्न रूपा हो तथा नल पुरूषों के मुकुटमणि हैं।

11- भवतो द्युत दोषेण सर्वे वय मुपप्लुताः।

अहीन पौरूषा बाला बलिभिर्बलवन्तरः।। (52-13)

अर्थ- भीम युधिष्ठिर से कहते हैं- हे धर्मराज ! आपके जुएं के दोष से हम लोग पुरूषार्थयुक्त होकर भी दीन बन गये हैं और वे मूर्ख दुर्योधन आदि भेंट में मिले हुए हमारे धन से सम्पन्न हों। इस समय अधिक बलशाली बन गये हैं।

12- क्षात्रं धर्म महाराज त्वमवेक्षितुमर्हसि।

न हि धर्मो महाराज क्षत्रियस्य वनाश्रयः।। (52-14)

अर्थ- भीम युधिष्ठिर से कहते हैं- महाराज ! आप क्षत्रिय धर्म की ओर तो देखिये। इस प्रकार बन में रहना कदापि क्षत्रियों का धर्म नहीं है।

13- विदर्भराज्ञो दुहिता दमयन्तीति विश्रुता।

रूपेण समतिक्रान्ता पृथिव्यां सर्वयोषितः।। (54-21)

अर्थ - नारद जी इन्द्र से दमयन्ती के रूपौदार्य का वृतान्त सुनाते हुए कहते हैं- विदर्भ नरेश भीम

के यहां दमयन्ती नाम से प्रसिद्ध एक कन्या उत्पन्न हुई है, जो मनोहर रूप सौंदर्य में पृथ्वी के सम्पूर्ण युवतियों को लांघ गयी है।

NOTES

14- कथं तु जात संकल्पः स्त्रिभुत्स्रजते पुमान्।

परार्थमीदृशं वक्तुं तत् क्षमन्तु महेश्वराः।। (55-8)

अर्थ- देवताओं द्वारा दूत बनाये जाने का निश्चय होने पर राजा नल देवताओं से कहते हैं -

हे देवेश्वरों ! जिसके मन में किसी स्त्री को प्राप्त करने का संकल्प हो गया है, वह पुरूष उसी स्त्री को दूसरे के लिए कैसे छोड़ सकता है। अतः आप लोग ऐसी बात कहने के लिए मुझे क्षमा करें।

15- देवेभ्योऽहं नमस्कृत्य सर्वेभ्यः पृथिवीपते।

वृणे त्वामेव भर्तारं सत्यमेतद् ब्रवीमि ते।। (56-14)

अर्थ- देवताओं के संदेशवाहक के रूप में दमयन्ती के निकट उपस्थित नल से दमयन्ती कहती है-

हे पृथ्वीपते ! मैं सम्पूर्ण देवताओं को नमस्कार करके आपको ही पति के रूप में चुनती हूँ। यह मैंने अपने अन्तर्मन की सच्ची बात कही है।

16- मनसा वचसा चैव यथा नाभिचराम्यहम्द।

तेन सत्येन विबुधास्तमेव प्रदिशन्तु मे।। (57-18)

अर्थ- स्वयम्वर में नल के रूप में उपस्थित देवगणों में से राजा नल को पहचान पाने से दमयन्ती देवताओं से प्रार्थना करती है-

हे देवताओ ! यदि मैं मन, वाणी तथा क्रिया द्वारा कभी भी सदाचार से च्युत नहीं हुई हूं, तो उस सत्य के प्रभाव से देवता लोग मुझे राजा नल की प्राप्ति करावें।

17- प्रत्यक्षदर्शिनं यज्ञे गतिं चानुत्तमां शुभाम्।। 157-35।।

नैषधाय ददौ शक्रः प्रीयमाणः शचीपतिः।

अर्थ- दमयन्ती द्वारा नल का वरण कर लिए जाने पर देवताओं ने उसे वरदान देना प्रारंभ किया-

शचीपति इन्द्र ने प्रसन्न होकर निषधराज नल को यह वर दिया कि मैं यज्ञ में तुम्हें प्रत्यक्ष दर्शन दूंगा और अन्त में सर्वोत्तम शुभ गति प्रदान करूंगा।

NOTES

18- अग्नि रात्मभवं प्रादात् यत्र वाञ्छति नैषधः।। 57-36।।

लोकानात्मप्रभांश्चैव ददौ तस्मै हुताशनः।

अर्थ- हविष्य भोक्ता अग्निदेव ने नल को अपने ही समान तेजस्वी लोक प्रदान किये और यह भी कहा कि राजा नल जहां चाहेंगे वहीं मैं प्रकट हो जाऊँगा।

19- यमस्त्वन्नरसं प्रादाद् धर्मे च परमां स्थितिम्द। 57-37।

अर्थ- यमराज ने यह कहा कि राजा नल की बनाई हुई रसोई में उत्तमोत्तम स्वाद एवं रस उपलब्ध होगा और धर्म में इनकी दृढ़निष्ठा बनी रहेगी।

20- अपां पतिरपां भावं यत्र वाञ्छति नैषधः।

स्रजश्चोत्तम गन्धाढ्याः सर्वे च मिथुनं ददुः।। (57-38)

अर्थ- जल के स्वामी वरूण ने नल की इच्छा के अनुसार जल प्रकट होने का वर दिया और यह भी कहा कि तुम्हारी पुष्पमालायें, सदा उत्तम गन्ध से सम्पन्न होंगी। इस प्रकार सभी देवताओं ने दो-दो वर दिये।

21- अपाप चेतसं पापो य एवं कृतवान् नलम्।

तस्माद् दुःखतरं प्राप्य जीवत्वसुख जीविकाम्द।। (63-17)

अर्थ- नल की दुःस्थिति से व्यथित होकर दमयन्ती आक्रोश एवं दुःख से सन्तप्त होकर कहती है- जिस पापी ने पुण्यात्मा राजा नल को इस दशा में पहुंचाया है। वह उनसे भी भारी दुःख में पड़कर दुःख की जिन्दगी बितावे।

22- यस्याभिशापाद् दुःखार्तो दुःखं विष्दति नैषधः।

तस्य भूतस्य नो दुःखाद् दुःखमप्यधिकं भवेत्। (63-16)

अर्थ- जिसके अभिशाप से निषध नरेश नल दुःख से पीड़ित होकर क्लेश पर क्लेश उठाते जा रहे

हैं। उस प्राणी का हम लोगों के दुःख से भी अधिक दुःख प्राप्त हो।

23- यद्यहं नैषधादन्यं मनसाऽपि न चिन्तये।

NOTES

तथायं तपततां क्षुद्रो परासुर्मृग जीवनः।। (63-38)

अर्थ- व्याध द्वारा दमयन्ती का शील भंग करने का प्रयास किये जाने पर दमयन्ती कहती है -

यदि मैं निषधराज नल के सिवा दूसरे किसी पुरूष का चिन्तन नहीं करती होऊँ, तो इसके प्रभाव से यह तुच्छ व्याध प्राणशून्य होकर गिर पड़े।

24- सा गत्वा त्रीनब्रहोरात्रान् ददर्श परमाङ्गना।

तापसा रण्य मतुलं दिव्यकानन शोभितम्द।। (64-61)

अर्थ- पति वियुक्त वन में भटक रही दमयन्ती जब ऋषियों के तपोवन की ओर बढ़ती है तब- वह दमयन्ती लगातार तीन दिन और तीन रात चलने के पश्चात् तपस्यिों से युक्त एक वन देखा, जो अनुपम तथा दिव्य वन से सुशोभित था।

25- उदर्कस्तव कल्याणि कल्याणों भविता शुभे।

वयं पश्याम तपसा क्षिप्रं प्रक्ष्यसि नैषधम्द।। (64-92)

अर्थ- ऋषियों द्वारा दमयन्ती की समग्र विपत्ति को सुनने के बाद उन्होंने तपोबल से भविष्य देखकर दमयन्ती से बोले-

हे कल्याणि ! हम अपने तपोबल से देख रहे हैं। तुम्हारा भविष्य परम कल्याणमय होगा। तुम शीघ्र ही निषध नरेश नल का दर्शन प्राप्त करोगी।

26- विषधानामधिपतिं नलं रिपुनिपातिनम्द।

भैति धर्मभृतां श्रेष्ठं द्रक्ष्यसे विगतज्वरम्द।। (64-93)

अर्थ- भीमकुमारी ! तुम शत्रुओं का संहार करने वाले निषध देश के अधिपति और धर्मात्माओं में श्रेष्ठ राजा नल को सब प्रकार की चिन्ताओं से रहित देखोगी।

27- विमुक्तं सर्वपापेभ्यः सर्वरत्नसमन्वितम्द।

तदेव नगरं श्रेष्ठं प्रशासन मरिन्दमम्द।। (64-94)

अर्थ- हे दमयन्ती ! तुम्हारे पति सब प्रकार के पाप जनित दुःखों से मुक्त और सम्पूर्ण रत्नों से सम्पन्न होंगे। शत्रुदमन राजा रत्न फिर उसी श्रेष्ठ नगर का शासन करेंगे।

NOTES

28- द्विषतां भयकर्तारं सुहृदां शोकनाशनम्द।

पतिं द्रक्ष्यसि कल्याणि कल्याणाभिजनं नृपम्द।। (64-95)

अर्थ- हे दमयन्ति ! राजा नल शत्रुओं के लिए भयदायक, और मित्रों के लिए शोक नाशक होंगें। कल्याणि ! इस प्रकार सत्कुल में उत्पन्न अपने पति को तुम (नरेश के पद पर प्रतिष्ठित) देखोगी।

29- उच्छिष्टं नैव भुञ्जीयां न कुर्या पादधावम्द।।

न चाहं पुरूषानन्यान् प्रभाषेयं कथंचन।। (65-68)

अर्थ- राजा नल से विमुक्त दमयन्ती संयोगतः चेदिराज के राजभवन पहुंचती है जहां अपने निवास की कतिपय प्रतिज्ञायें राजमाता के समक्ष उपस्थापित करती हुई कहती है -

मैं किसी का जूंठा नहीं खाऊँगी। किसी के पैर नहीं धोऊँगी और किसी भी दूसरे पुरूष से किसी तरह भी वार्तालाप नहीं करूंगी।

30- प्रार्थयेद् यदि मां कश्चिद् दव्ड्यस्ते स पुमान् भवेत।

वध्यश्च तेडसकृन्मन्द इति में व्रतमाहितम्द।। (65-69)

अर्थ- हे राजमाता ! यदि कोई पुरूष मुझे प्राप्त करना चाहे तो वह आपके द्वारा दण्डनीय हो, और बार-बार ऐसा अपराध करने वाले मूढ़ को आप प्राणदण्ड भी दें। यही मेरा निश्चित व्रत है।

31- स्पृरोयं तेन सत्येन पदावेतौ महीपते।

यथा नासत्कृतं किञ्चिन्मनसापि चराम्यहम्द।। (76-31)

NOTES

अर्थ- (राजा नल को ढूढ़ निकालने का अद्भुत उपाय दमयन्ती ने सोचा। उसने सर्वत्र यह बात विस्तारित की, कि दमयन्ती अपना द्वितीय विवाह स्वयम्बर के माध्यम से करने जा रही है, यह समाचार जब नल तक पहुंचा तो वह दमयन्ती के पास पहुंचकर ऐसा न करने की प्रार्थना करने लगा। तब दमयन्ती राजा को अपने सतीत्व का परिचय देती है।

हे महाराज नल ! मैं मन से भी कभी कोई असदाचरण नहीं करती हूँ और इसी सत्य की शपथ खाकर आपके इन दोनों चरणों का स्पर्श करती हूँ।

32- अयं चरति लोकऽस्मिन् भूतसाक्षी सदागति।

एष मे मुञ्चतु प्राणान् यदि पापं चराम्यहम्द।। (76-32)

अर्थ- हे महीपति नल ! ये सदा गतिशील वायुदेवता इस जगत् में निरन्तर विचरते रहते हैं। अतः ये सम्पूर्ण भूतों के साक्षी हैं। यदि मैंने पाप किया है तो ये मेरे प्राणों का हरण कर लें।

34- यथा चरित तिग्मांशुः परेण भुवनं सदा।

स मुञ्चतु मम प्राणान् यदि पापं चराम्यहम्द।। (76-33)

अर्थ- प्रचण्ड किरण वाले सूर्य देव समस्त भुवनों के ऊपर विचरते हैं। (अतः वे भी सबके शुभाशुभ कर्म देखते रहते हैं। यदि मैने पाप किया है, तो ये मेरे प्राणों का हरण कर लेवें।

35- चन्द्रमाह सर्वभूतानामन्तश्चति साक्षिवत्।

स मुञ्चतु मम प्राणान् यदि पापं चराभ्यहम्द।। (76-34)

अर्थ- चित्त के अभिमानी देवता चन्द्रमा समस्त प्राणियों के अन्तःकरण में साक्षी रूप से विचरते हैं। यदि मैंने पाप किया है, तो वे मेरे प्राणों का हरण कर लें।

36- एते देवास्त्रयः कृत्स्नं त्रैलोक्यं धारयन्ति वै।

विब्रुवन्तु यथा सत्यभेतद् देवास्त्यजन्तु माम्।। (76-35)

अर्थ- सूर्य, वायु एवं चन्द्रमा, सम्पूर्ण त्रिलोकी को धारण करते हैं। मेरे कथन में कितनी सच्चाई है, इसे देवता लोग स्वयं स्पष्ट करें। यदि मैं झूंठ बोलती हूं तो देवता लोग मेरा त्याग

कर दें।

37- एवमुक्त स्तथा वायुरन्तरिक्षादभाषत।

नैषा कृतवती पापं नल सत्यं ब्रवीमि ते।। (76-36)

NOTES

अर्थ- दमयन्ती के ऐसा कहने पर अन्तरिक्ष लोक से वायु देवता ने कहा- हे नल ! मैं तुमसे सत्य कहता हूँ। इस दमयन्ती ने कोई पाप नहीं किया है।

38- राजन् शीलनिधिः स्फीतो दमयन्त्या सुरक्षितः।

साक्षिणो रक्षिणश्चास्याः वयं त्रीन् परिवत्सरान्।। (76-37)

अर्थ- राजन् दमयन्ती ने अपने शील की उज्जवल निधि को सदा सुरक्षित रखा है। हम लोग तीन वर्षों तक निरन्तर इसके रक्षक और साक्षी रहे हैं।

39- उपायो विहितश्चायं त्वदर्थमतुलोऽनया।

न हयेकाह्ना शतं गन्ता त्वामृतेऽन्यः पुमानिह।।

अर्थ- तुम्हारी प्राप्ति के लिए दमयन्ती ने यह अनुपम उपाय ढूंढ़ निकाला था। क्योंकि इस जगत् में तुम्हारे सिवा दूसरा कोई पुरूष नहीं है। जो एक दिन में रथ द्वारा सौ योजन जा सके।

नलोपाख्यान का सारांश :-

दुर्योधन द्वारा छल कपट से (द्युत द्वारा) राज्य के छिन जाने पर तथा बारह वर्षों का वनवास भोग करते समय युधिष्ठिर भीम आदि पाण्डव अर्जुन के तपस्यार्थ चले जाने पर उद्विग्न रहने लगे। वे अपने दुर्भाग्य तथा प्रतिकूल परिस्थिति के लिए स्वयं को विश्व का अकेला व्यक्ति बताना शुरू कर दिया। तब उस समय उपस्थित वृहदश्व ने नलोपाख्यान सुनाना प्रारंभ किया-

यद् व्रवीषि महाराज न मत्तो विद्यते क्वचित्।

अल्पभाग्यतरः कश्चिद् पुमानस्तीति पाण्डव। (53-51)

अत्र ते वर्णयिष्यामि यदि शुश्रूषसेऽनघ

यस्त्वत्तो दुःखितन्तरो राजाऽऽसीत् पृथिवीपते।। (53-52)

निषधेषु महीपालो वीरसेन इति श्रुतः।

तस्य पुत्रोऽभवन्नाम्ना नलो धर्मार्थं कोविदः।। (53-55)

NOTES

राजन् युधिष्ठिर ! तुमसे भी अधिक विपन्न अवस्था को प्राप्त करने वाला एक राजा हुआ जिसका नाम नल था। वनवास में तुम्हारे साथ तुम्हारी पत्नी तथा तुम्हारे भ्राता साथ हैं जबकि नल को वनवास अकेले ही व्यतीत करना पड़ा था। राजन् इस उपाख्यान को विस्तार से सुनो-

निषध देश में वीरसेन के पुत्र नल हुआ। वह देवों में श्रेष्ठ इन्द्र की ही भांति मनुष्यों में सर्वश्रेष्ठ था। वह ब्राहमण भक्त, ज्ञानी, शूरवीर, द्यूतक्रीड़ा का प्रेमी, सत्यवादी, महान् तथा एक अक्षौहिणी सेना का स्वामी था। वह श्रेष्ठ स्त्रियों को प्रिय था और उदार, जितेन्द्रिय, प्रजाजनों को प्रिय एवं उनका रक्षक तथा धनुर्धर्रा में स्वयं मनु था।

इधर विदर्भ देश में भयानक पराक्रमी भीम नामक राजा थे। वे शूरवीर और सर्वसद्गुण सम्पन्न थे। उन्हें कोई संतान न थी। दमन नामक ब्रहमर्षि के आशीर्वाद से उन्हें एक कन्या तथा तीन उदार पुत्र हुए। कन्या का नाम दमयन्ती था। जो रूप, तेज, यश, श्री एवं सौभाग्य के द्वारा तीनों लोकों में विख्यात यशस्विनी हुई।

लोग कौतूहलवश दमयन्ती के समीप नल की प्रशंसा करते थे तथा निषधराज नल के निकट बार-बार दमयन्ती के सौन्दर्य की प्रशंसा करते थे।

तस्याः समीपं तु नले प्रशशंसुः कुतूहलात्।

नैषधस्य समीपे तु दमयन्तीं पुनः पुनः।। (महा. वन पर्व 53-16)

इस प्रकार निरन्तर एक दूसरे के गुणों को सुनते-सुनते उन दोनों में बिना देखे ही परस्पर काम (अनुराग) उत्पन्न हो गया। उनकी वह कामना दिन-दिन बढ़ती ही चली गयी। एक दिन उपवन में बैठे हुए नल को वहीं विचरण करते हुए हंस दिखलाई पड़े उनमें से एक को पकड़ लिया। उस हंस ने महाराज से कहा मुझे मत मारिये मैं आपका प्रिय कार्य करूंगा। राजा के मनोभावों को समझकर हंस ने कहा कि मैं दमयन्ती के निकट आपकी ऐसी प्रशंसा करूंगा कि वह आपके सिवा दूसरे किसी पुरूष को मन में कभी भी स्थान न देंगी।

दमयन्ती सकाशे त्वां कथयिष्यामि नैषध।

यथा त्वदन्यं पुरूषं न सा मंस्यति कर्हिचित्।। (महा. वन पर्व 53-21)

NOTES

राजा का संदेश लेकर हंस दमयन्ती के निकट गया। दमयन्ती ने अपूर्व पक्षी को देखा और उसे पकड़ लिया। हंस ने मनुष्य की वाणी में दमयन्ती से कहा -

राजकुमारी दमयन्ती सुनो। निषण देश में नल नाम से प्रसिद्ध एक राजा है। जो अश्विनी कुमारों के समान सुन्दर है। मनुष्यों में तो कोई भी उनके समान है ही नहीं। सुन्दर ! वह रूप की दृष्टि से मूर्तिमान् कामदेव सा प्रतीत होता है। यदि तुम उसकी पत्नी बन जाओ तो यह मनोहर रूप तथा तुम्हारा जन्म सफल हो जाय। हम लोगों ने देवता, गन्धर्व, मनुष्य, नाग तथा राक्षसों को भी देखा है। परन्तु हमारी दृष्टि में अब तक उनके जैसा कोई भी पुरूष कभी नहीं आया है। तुम रमणियों में रत्नस्वरूपा हो और नल पुरूषों में मुकुट-मणि हैं। यदि किसी विशिष्ट नारी का विशिष्ट पुरूष के साथ संयोग हो तो वह विशेष गुणकारी होता है।

यह सुनकर दमयन्ती हंस को उक्त बाते ही नल को भी सुनाने का आग्रह करती है। हुस दमयन्ती का संदेश राजा नल को सुना देता है। दमयन्ती कामज्वर से संतप्त रहने लगती है। इधर स्वर्ग में नारद जी से इन्द्र पूंछता है कि पृथ्वी के क्षत्रिय स्वर्ग क्यों नही आ रहे हैं, तब नारद जी दमयन्ती के स्वयम्बर की चर्चा करते हैं उन्हें बताते हैं कि समस्त क्षत्रिय राजा दमयन्ती के स्वयम्बर में जा रहे हैं। नारद जी द्वारा दमयन्ती के रूप-सौन्दर्य एवं गुण सौन्दर्य का ज्ञान प्राप्त कर देवता भी विदर्भ नगर पधारे, वहां नल को पाकर उन्होंने अपना संदेश वाहक स्वयं नल को बनाया। पद्यपि नल ने आत्मानुरक्ति (दमयन्ती विषयक) देवताओं से बता दी थी। राजा नल इन्द्रादि देवताओं, का संदेश लेकर महल में दमयन्ती के पास पहुंचता है। वहां नल का तथा दमयन्ती का आपस में परिचय होता है। राजा नल देवताओं का संदेश सुनाते हुए कहते हैं -

विप्रियं ह्याचरन् मर्त्यो देवानां मृत्युभिच्छति।

त्राहि मामनवद्याङ्गि वरयस्व सुरोत्तमान्।।

अर्थात् निर्दोष अंगों वाली सुन्दरी ! देवताओं के विरूद्ध चेष्टा करने वाला मानव मृत्यु को

प्राप्त हो जाता है। अतः तुम मुझे बचाओ और उन श्रेष्ठ देवताओं का ही वरण करो तथा देवताओं को ही पाकर निर्मल वस्त्र, दिव्य एवं विचित्र पुष्पहार तथा मुख्य-मुख्य आभूषणों का सुख भोगो। जो इस सारी पृथ्वी को संक्षिप्त करके पुनः अपना ग्रास बना लेते हैं, उन देवेश्वर अग्नि को कौन नारी अपना पति न चुनेगी। जिस दण्ड के भय से संसार में आये हुए समस्त प्राणि समुदाय धर्म का ही पालन करते हैं, उन यमराज को कौन अपना पति नहीं बरेगी ? दैत्यों और दानवों का मर्दन करने वाले धर्मात्मा महामना सर्वदेवेश्वर महेन्द्र का कौन नारी पति रूप में वर्णन न करेगी ? यदि तुम ठीक समझती हो तो लोकपालों में प्रसिद्ध वरूण को निःशंक होकर अपना पति बनाओ। यदि एक हितैष्रूज्ञी सुहृद् का वचन है, इसे सुनो। तदनन्तर निषधराज नल के ऐसा कहने पर दमयन्ती शोकाश्रुओं से भरे हुए नेत्रों द्वारा देखती हुई इस प्रकार बोली-

NOTES

पृथ्वीपते ! मैं सम्पूर्ण देवताओं को नमस्कार करके आप ही को अपना पति चुनती हूँ। यह मैंने आपसे सत्य बात कही है।

देवेभ्योऽहं नमस्कृत्य सर्वेभ्यः पृथिवीयते।

श्रृणेत्वामेव भर्तारं सत्यमेतद् ब्रवीमि ते।। (महा. वनपर्व 56-14)

राजा नल दमयन्ती का यह संदेश देवताओं को आकर सुनाते हैं कि -

उस बाला ने मुझसे कहा- नरव्याघ्र ! सभी देवता आपके साथ उस स्थान पर पधारें। जहां मेरा स्वम्बर होने वाला है। निषधराज ! मैं उन देवताओं के समीप हो आपका वरण कर लूँगी। ऐसा करने पर आपको दोष नहीं लगेगा।

अनन्तर विदर्भाधिपति भीम ने स्वयम्बर का आयोजन किया। क्षत्रिय राजाओं के अतिरिक्त देवगण भी पधारे जिन्होंने नल का कपटवेष धारण कर रखा था, दमयन्ती ने रंगभूमि में नल के साथ देवताओं को भी नल के रूप में देखकर संशयग्रस्त हो गई। वह असली नल को पहचानने का प्रयास करने लगी तथा स्वयं ही देवताओं से प्रार्थना करने लगी -

मैंने हंसो की बात सुनकर निषध नरेश नल का पति रूप में वरण कर लिया है। इस सत्य के प्रभाव से देवता लोग स्वयं ही मुझे राजा नल की पहचान करा दें। यदि मैं मन, वाणी, एवं क्रिया

द्वारा कभी सदाचार से च्युत नहीं हुई हूं तो उस सत्य के प्रभाव से देवता लोग मुझे राजा नल की प्राप्ति करावें। दमयन्ती इस करूण अभ्यर्थना से द्रवीभूत देवताओं ने नल को पहचानने की शक्ति दमयन्ती को दे दी। दमयन्ती ने देखा कि नल के रूप में उपस्थित पांच व्यक्तियों में से केवल एक व्यक्ति ऐसे हैं जिनके गले की पुष्पमाला कुम्हला गई है। उनके शरीर की परछाई पड़ रही है। उनके अंगों में धूलकण तथा पसीने की बूंदे है। वे पृथ्वी का स्पर्श किये हैं तथा उनकी पलके गिरती हैं। इस प्रकार दमयन्ती ने नल को पहचान कर उनका पतिरूप में वरण कर लिया। अनन्तर देवताओं ने प्रसन्न होकर नल को आठ वरदान दिये -

NOTES

शचीपति इन्द्र ने प्रसन्न होकर निषधराज नल को यह वर दिया कि मैं यज्ञ में तुम्हे प्रत्यक्ष दर्शन दूंगा और अन्त में सर्वोत्तम शुभ गति प्रदान करूंगा। हविन्य भोक्ता अग्निदेव ने नल को अपने ही समान तेजस्वी लोक प्रदान किये और यह भी कहा कि राजा नल जहां चाहेंगे, वहीं मैं प्रकट हो जाऊँगा। यमराज ने यह कहा कि राजा नल की बनायी हुई रसोई में उत्तमोत्तम रस एवं स्वाद उपलब्ध्ध होगा और धर्म में इनकी दृढ़निष्ठा बनी रहेगी। जल के स्वामी वरूण ने नल की इच्छा के अनुसार जल प्रकट होने का वर दिया और यह भी कहा कि तुम्हारी पुष्पमालायें सदा उत्तम गन्ध से सम्पन्न होंगी। इस प्रकार सब देवताओं ने दो-दो वर दिये। तद्यथा -

नैषधाय ददौ शक्रः प्रीयमाणः शचीपतिः।

अग्निरात्म भवं प्रादात् यत्र वाञ्छति नैषधः।। 36।।

लोकानात्म प्रभांश्चैव ददौ तस्मै हुताशनः।

यमस्त्वन्नरसं प्रादात् धर्मे च परमां स्थितिम्द।। 37।।

अपां पतिरपां भावं यत्र वाञ्छति नैषधः।

स्रजश्चोत्तमगन्धाढ्याः सर्वे च मिथुनं ददुः।।38।।

दमयन्ती को लेकर नल निषध देश चले जाते हैं जहां उनके इन्द्रसेन नामक पुत्र तथा इन्द्रसेना नामवाली एक कन्या को जन्म दिया। इधर स्वम्बर का समाचार सुनकर कलियुग दमयन्ती से विवाह करना चाहता है। जब देवताओं ने स्वयम्बर हो जाने की तथा दमयन्ती द्वारा नल को वरण कर लिए

NOTES

जाने की सूचना दी तो वह क्रोधित हो उठा तथा नल को बर्बाद करने की प्रतिज्ञा कर ली। किसी प्रकार कलियुग नल के शरीर में प्रवेश कर जाता है तथा उसे पुष्कर के साथ द्यूत क्रीड़ा हेतु प्रेरित करता है। राजा नल धीरे-धीरे सब कुछ हार जाता है। दमयन्ती अपने पुत्रों को वार्ष्येय सूत द्वारा कुण्डिनपुर (मायके) भेज देती है। इधर राजा नल सब कुछ हार कर दमयन्ती के साथ अपना राज्य छोड़कर बन चले जाते हैं। हवाँ कलि प्रभाव से पक्षीगण नल के एकमात्र वस्त्र का भी अपहरण कर लेते हैं। राजा नल स्वयं तथा दमयन्ती की स्थिति पर अत्यधिक चित्तातुर हो उठते हैं। उन्होंने दमयन्ती के परित्याग का निर्णय लिया ताकि वह मेरी तरह कष्ट न उठाये। राजा नल जानते थे कि मेरी पत्नी मेरी भक्त है पतिव्रता है। पातिव्रत तेज के कारण मार्ग में कोई इसका सतीत्व नष्ट नहीं कर सकता। अत्यन्त दुःखी मन से राजा दमयन्ती को छोड़कर चले जाते हैं इधर दमयन्ती की निद्रा टूटने पर वह अपने पति को न पाकर अत्यन्त आकुल हो उठती है। वह पागलों की भांति घूम-घूमकर नल को ढूढ़ने लगी तथा क्रोधित होकर शाप दिया -

यस्याभि शापाद् दुःखार्तो दुःखं विम्दति नैषधः।

तस्य भूतस्य नो दुःखाद् दुःखमप्यधिकं भवेत्।। (महा. वनपर्व 63-16)

अर्थात् जिसके अभिशाप से निषधनरेश नल दुःख से पीड़ित होकर क्लेश पर क्लेश उठा रहे हैं, उस प्राणी को हम लोगों के दुःख से भी अधिक दुःख प्राप्त हो।

जिस पापी ने पुण्यात्मा राजा नल को इस दशा में पहुंचाया है। वह उनसे भी भारी दुःख में पड़कर दुःख की ही जिन्दगी बितावें।

अपापचेतसं पापो य सवं कृतवान् नलम्।

तस्माद् दुःखतरं प्राप्य जीवत्व सुख जीविकाम्।। (महा. वन पर्व 63-17)

उसी समय एक अजगर महारानी दमयन्ती को निगलना प्रारंभ कर देता है। महारानी रक्षा के लिए पुकारती है तभी कोई एक व्याध आकर उनकी रक्षा करता है। किन्तु वह व्याध दमयन्ती पर आसक्त हो जाता है तथा उसके शीलभंग का प्रयास करता है किन्तु दमयन्ती के पातिव्रत्य तेल से वह भस्म हो जाता है। वन में भटकती हुई दमयन्ती संयोगतः ऋषियों के तपोवन में पहुंच जाती

है जहां तपस्वी लोग उसका स्वागत करते हैं तथा नल से पुनर्मिलन हेतु आश्वस्त करते हैं तथा अदृयय हो जाते हैं। दमयन्ती आगे बढ़ती हुई व्यापारियों के एक दल को देखती है। व्यापारी दल उसे देवांगना समझकर आश्चर्य में पड़ जाते हैं तब दमयन्ती उन्हें अपना परिचय देती है।

NOTES

विदर्भराण्मय पिता भर्ता च नैषधः।

नलो नाम महाभाग स्तं मृग्याभ्यपराजितम्द।। (महा. वनपर्व 64-125)

व्यापारी दल के साथ ही दमयन्ती चेदिराज सुवाहु के नगर की ओर बढ़ने लगती है। तभी मार्ग में जंगली हाथियों द्वारा सभी व्यापारी मारे जाते हैं। दमयन्ती चेदिराज के राजभवन में पहुंच जाती है जहां उसकी भेंट राजमाता से हो जाती है। राजामाता भवन में रूकने का (पति मिलन पर्यन्त) आग्रह करती है तब दमयन्ती उनसे शर्त रखती है कि हे राजमाता मैं एक नियम के साथ ही रह सकती हूँ। मैं किसी का जूंठा नहीं खाऊँगी। किसी के पैर नहीं धोऊँगी और किसी भी दूसरे पुरूष से किसी भी प्रकार का वार्तालाप नहीं करूंगी। यदि कोई पुरूष मुझे प्राप्त करना चाहे तो वह आपके द्वारा दण्डनीय हो और बार-बार ऐसे अपराध करने वाले मूढ़ को आप प्राणदण्ड भी दें, यही मेरा निश्चित व्रत है-

रत्न मातुर्वचः श्रुत्वा दमयन्ती वचोऽब्रवीत्।

समयेनोत्सहे वस्तुं त्वयि वीरप्रजायिनि।।

अच्छिष्टं नैव भुञ्जीयां न कुर्या पदाधावनम्द।

न चाहं पुरुवानयान् प्रभाषेय कथंचन।।

प्रार्थयेद् यदि मां कश्चिद् दण्ड्यस्ते स पुमान भवेत्।

वध्यश्चन तेडसकृन्मन्द इति में ब्रतमाहितम्द।। (मा. वन. 65-67 से 69)

दमयन्ती की बात राजमाता मान लेती है, वह वहीं रहने लगती है। इधर राजा नल भटकते हुए वन में दावानल अग्नि देखते हैं जहां कर्कोटक नामक नाग जला जा रहा था वह रक्षा के लिये पुकार रहा था। उसने महाराज नल से आत्मरक्षा की गुहार लगाई तथा स्वयं चलकर कहीं भी न जा सकने की बात बताई। राजा उसे, अन्यत्र ले जाते हैं तथा दावानल से प्राण बचाते हैं। राजा को वह दस कदम चलने की सलाह देता है तथा वह जैसे ही बोलते हुए दशवां कदम दश कहकर रखते हैं

NOTES

वह कर्कोटक नाम उन्हें डस लेता है। राजा का पूर्वतन शरीर लुप्त होकर वह श्याम वर्ण के हो जाते हैं, राजा आश्चर्य चकित होता है तब कर्कोटक ने कहा, मैंने आपके पूर्व शरीर को इस लिए उद्दृश्य कर दिया ताकि लोग आपको पहचान न सकें। हे महाराज जिस कलियुग के कपट से आपको अत्यन्त दु:खों का सामना करना पड़ रहा है वह मेरे विष से दग्ध होकर आपके शरीर में बहुत ही कष्ट से निवास करेगा। हे नरव्याघ्र ! मेरे प्रसाद से आपको दाढ़ी वाले जन्तुओं, और शत्रुओं तथा वेदवेत्ताओं के शाप से कभी भी भय नहीं होगा। आपको विषजनित पीड़ा कभी भी नहीं होगी। आप युद्ध में भी सदा विजय प्राप्त करेंगे। वह उन्हें आगे बढ़ने के मार्ग तथा उपाय भी सुझाता है, जिसके प्रभाव से राजा नल शाप से मुक्त हो सके। चलते समय राजा नल को कर्कोटक ने दो दिव्यवस्त्र भी दिये जिसके प्रभाव से राजा अपना पूर्व रूप प्राप्त सकता था। महाराज नल आगे बढ़ते हुए राजा ऋतुपर्ण के यहां पहुंचते हैं जहां उन्हें अश्वाध्यक्ष पद पर नियुक्त किया जाता है। राजा दमयन्ती के लिए अत्यन्त चिन्तातुर रहते हुए राजा ऋतुपर्ण को अश्वविद्या सिखाते है। राजा नल बाहुक के नाम से सेवा करते हुए अन्य सारथी जीवल से मित्रता कर लेते हैं। जीवल का आप बीती सुनाते हैं।

इधर विदर्भ नरेश्या भीम नल एवं दमयन्ती की खोज में ब्राहमणों को भेजते हैं। उनमें से सुदेव नामक ब्राहमण चेदिराज के भवन में जाकर दमयन्ती के रूप तथा गुणों का चिन्तन करते हुए दमयन्ती को पहचान लेता है तथा उससे भेंट करता है। ब्राहमण सुदेव कहता है -

अहं सुदेवो वैदर्भि भ्रातुस्ते दयित: सखा।

भीमस्य वचनाद् राज्ञस्त्वामन्वेष्टुंभिहागत:।। (महा.वन. 68-28)

अर्थात् हे देवि ! मैं आपके भाई का मित्र सुदेव हूँ। महाराज भीम की आज्ञा से आपकी खोज में यहां आया हूं। हे देवि ! आपके माता-पिता, भ्राता तथा आपके दोनों बालक कुशल हैं। आपकी खोज में सैकड़ों ब्राहमण लगे हुए हैं। दमयन्ती उस ब्राहमण के साथ पितागृह विदर्भ देश चली जाती है तथा वहां से नल को ढुढ़ने के लिए अपना संदेश ब्राहमणों द्वारा सर्वत्र भेजती है -

क्व नु त्वं कितवच्छित्वा वस्त्रार्धं प्रस्थितो मम।

उत्सृज्ल्य विपिने सुप्तामनुरक्तां प्रियां प्रिय।।

सा वें यथा त्वया दृष्टा तथा डडस्ते त्वत्प्रतीक्षिणी।

दहयमाना भृशं बाला वस्त्रार्धेनाभिसंवृता।।

तस्या रुदत्याः सततं तेन शंकेन पार्थिव।

प्रसादं कुरु वै वीर प्रतिवाक्यं ददस्व च।।

एव मन्यच्च वक्तत्यं कृपां कुर्याइ यथा मयि।

वायुना धूपमानो हि वनं दहति पावकः।।

भर्तव्या रक्षणीया च पत्नी पत्या हि सर्वदा।

तन्नष्टयुभयं कस्माद् धर्मज्ञस्य सतस्तव।।

ख्यातः प्राज्ञः कुलीवश्च सानुक्रोशो भवान् सदा।

संवृतो निरनुक्रोशः शंके मद्भाग्यसंक्षयात्।।

तत् कुरुष्व नरव्याघ्र दयां मयि नरर्षभ।

आनृशंय्यं परो धर्मस्त्वत्त एव हि मे श्रुतः।। (महा. वन. 69-37 से 43)

अर्थात ओ जुआरी प्रियतम ! तुम बन में सोई हुई और अपने पति में अनुराग रखने वाली मुझ प्यारी पत्नी को छोड़कर तथा मेरे आधे वस्त्र को फाड़कर कहां चल दिये। उसे तुमने जिस अवस्था में देखा, उसी अवस्था में वह आज भी है और तुम्हारे आगमन की प्रतीक्षा कर रही है। आधे वस्त्र से अपने शरीर को ढंककर वह युवती तुम्हारी विरहाग्नि में निरन्तर चल रही है। वीर ! भूमिपाल ! सदा तुम्हारे शोक से रोती हुई अपनी उस प्यारी पत्नी पर पुनः कृपा करो और मुझे मेरी बात का उत्तर दो। ब्राहमणों ! से तथा और भी बाते आप लोग उनसे कहें जिससे वे मुझ पर कृपा करें। उनसे कहना कि प्राणनाथ ! पति को उचित है कि वह सदा अपनी पत्नी का भरण पोषण करे तथा संरक्षण करे। आप धर्मज्ञ और साधुपुरूष है। आपके ये दोनों कर्तव्य सहसा नष्ट कैसे हो गये। आप विख्यात विद्वान, कुलीन और सदा सबके प्रति दयाभाव रखने वाले हैं परन्तु मेरे हृदय में यह संदेह होने लगा है कि आप मेरा भाग्य नष्ट होने के कारण मेरे प्रति निर्दय हो गये हैं। नरव्याघ्र ! आप मुझ पर दया कीजिये। मैंने आपके ही मुख से सुन रखा है कि दयालुता सबसे बड़ा धर्म है।

ब्राहमण दमयन्ती का संदेश सर्वत्र प्रसारित करते हैं। पर्णाद् नामक ब्राहमण दमयन्ती को

NOTES

बाहुक रूपधारी नल का समाचार बताता है। तब दमयन्ती राजा ऋतुपर्ण के यहां (जहां बाहुक रूप में नल था) के यहां अपने स्वयम्बर का संदेश भेजा कि भीमकुमारी दमयन्ती पुनः स्वयम्बर करेगी। वहां बहुत से राजा और राजकुमार सब ओर से आ रहे हैं। उसके लिए समय नियत हो चुका है वह कल ही स्वयम्बर करेगी। अतः आप शीघ्र ही प्रस्थान करें। वह कल सूर्योदय होने के बाद दूसरे पति का वरण कर लेंगी क्योंकि वीरवर नल जीवित हैं इसका कुछ पता नहीं लगता है।

NOTES

राजा ऋतुपर्ण स्वयम्बर में जाने की लालसा से बाहुक (नल); को कहता है कि तुम एक ही दिन में मुझे वहां पहुंचा दो। राजा नल अपने कृत पर पश्चाताप करते हैं तथा दुःखी मन से ऋतुपर्ण को लेकर स्वयम्बर में जाते हैं। मार्ग में बाहुक के अश्वसंचालन से राजा ऋतुपर्ण तथा वार्ष्णेय प्रसन्न हो जाते हैं वे मार्ग में नल का द्यूत विद्या का रहस्य बताते हैं जिससे राजा नल के शरीर से कलियुग निकल जाता है। ऋतुपर्ण कुण्डिन नगर पहुंचते हैं। वहां दमयन्ती सोचती है कि यदि आज नल मुझे स्वीकार नहीं करते हैं तो मैं अपने प्राणों का परित्याग कर दूंगी। दमयन्ती बाहुक के पास अपनी सखी केशिनी को भेजती है जो अपनी चतुरता द्वारा राजा नल को पहचान लेती है ? राजा नल अपना परिचय एवं आप बीती उसे बताते हैं केशिनी दमयन्ती के निर्देश पर राजा नल की परीक्षा लेती है परीक्षा में सभी बाते सम्मिलित होती हैं जो स्वयम्बर में इन्द्र, अग्नि, वायु, जल (वरुण) ने वरदान के रूप में नल को दे रखी थी। दमयन्ती विश्वस्त हो जाती है तथा बाहुक से भेंट करती है। नल का पूर्व शरीर का प्राकट्य हो जाता है तथा नल द्वारा दमयन्ती पर आक्षेप करने पर वह अपने अनन्य प्रणय तथा पातिव्रत्य को प्रकट करती हुई प्रतिज्ञान करती है-

हे महीपते मैं मन से भी कभी कोई असदाचरण नहीं करती हूं और इसी सत्य की शपथ खाकर आपके इन दोनों चरणों का स्पर्श करती हूं। ये सदा गतिशील वायुदेवता इस जगत में निरन्तर विचरते रहते हैं। अतः ये सम्पूर्ण भूतों के साक्षी हैं यदि मैंने पाप किया है तो ये मेरे प्राणों का हरण कर लें। प्रचण्ड किरणों वाले सूर्यदेव समस्त भुवनों के ऊपर विचरते हैं (अतः वे कर्मसाक्षी है यदि मैं पापकर्मा हूं तो वे मेरा प्राण हरण कर लें।

चित्त के अभिमानी देवता चन्द्रमा समस्त प्राणियों के अन्तः करण में साक्षी रूप से विचरते हैं। यदि मैंने पाप किया है तो वे मेरे प्राणों का हरण कर लें। दमयन्ती की इस कठिन प्रतिज्ञान पर

अन्तरिक्ष से वायु देवता ने नल से कहा- हे नल ! मैं तुमसे सत्य कहता हूं- इस दमयन्ती ने कभी कोई पाप नहीं किया है।

NOTES

एव मुक्तस्तथा वायु रन्तरिक्षादभाषत।

नैषा कृतवती पापं नलं सत्यं व्रवीमि ते।। (महा. नल. 77-36)

हे राजन् दमयन्ती ने अपने शील की उज्ज्वल विधि को सदा सुरक्षित रखा है। हम लोग तीन वर्षों तक निरन्तर इसके रक्षक तथा साक्षी रहे हैं। तुम्हारी प्राप्ति के लिए दमयन्ती ने यह अनुपम उपाय ढूंढ़ निकाला था क्योंकि इस जगत् में तुम्हारे सिवा कोई पुरूष नहीं है जो एक ही दिन में सौ योजन (रथ द्वारा) जा सके। हे राजन् दमयन्ती तुम्हारे योग्य है तथा तुम दमयन्ती के योग्य हो। तुम्हें इसके चरित्र पर संदेह नहीं करना चाहिये। तुम अपनी पत्नी से निःशंक होकर मिलो।

इस प्रकार वायु के समझाने पर नल एवं दमयन्ती का सुखपूर्वक मिलाप हो जाता है। राजा नल पुनः द्यूत क्रीड़ा पुष्कर के साथ खेलता है तथा उसे हराकर पुनः अपना राज्य प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार इस उपाख्यान का सुखद समापन होता है।

इकाई – 5

विष्णु पुराण के प्रथम पाँच अध्याय

उद्देश्य :-

विष्णु पुराण वैष्णव दर्शन का मूल आलम्बन है। दार्शनिक महत्व की दृष्टि से श्रीमद्भागवत महापुराण के उपरान्त विष्णु पुराण का ही स्थान है। इसीलिए आचार्य रामानुज ने श्रीभाष्य में इसका प्रमाण तथा उद्धरण बहुलता से दिया है। चूंकि पुराण गम्भीर विषयों को अपनी सहज तथा सरल सुबोध शैली में पाठकों को समझाने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहण करते हैं अतः छात्रों को उक्ताशय से इस पुराण के प्रथम अंश के पांच अध्यायों का चयन कर पाठ्यविषय के रूप में चयनित किया गया है। आशा है छात्रगण विष्णु पुराण के अनुशीलन से भारतीय दार्शनिक तत्वों से सरलता पूर्वक परिचित हो सकेंगे।

विष्णु पुराण का सामान्य परिचय :-

NOTES

दार्शनिक महत्व की दृष्टि से भागवत पुराण के बाद विष्णु पुराण का ही स्थान आता है। यह वैष्णव दर्शन का मूल आलम्बन है। इसीलिए आचार्य रामानुज ने अपने श्रीभाष्य में अनेकत्र विष्णु पुराण के श्लोकों का प्रमाण एवं उद्धरण प्रस्तुत किया है। परिमाण में यह न्यून होने पर भी महत्व की दृष्टि में आगे है। इसके खण्डों को अंश कहते हैं। इसके अंशों की संख्या छः है तथा अध्यायों की संख्या 126 है। इस प्रकार परिमाण में यह भागवत का तृतीयांश मात्र है। प्रथम अंश में सृष्टिवर्णन है (अध्याय 11 से 20) द्वितीय अंश्या में भूगोल का वर्णन अत्यन्त सांगोपांग विधि से दिया गया है। तृतीय अंश में आश्रम सम्बन्धी कर्तव्यों का विशेष निर्देश है। इसके तीन अध्यायों में (अध्याय 4 से 6) वेद की शाओं का विशिष्ट वर्णन है, जो वेदाभ्यासियों के लिए बड़ी ही काम की वस्तु है। चतुर्थ अंश विशेषतः ऐतिहासिक है। जिसमें सोमवंश के अन्तर्गत ययाति का चरित वर्णित है। यदु, तुर्वसु, द्रुह्यु, अनु, पुरु इन पांच प्रसिद्ध क्षत्रियवंशों का भिन्न-भिन्न अध्यायों में वर्णन मिलता है। पंचम अंश के 38 अध्यायों में भगवान कृष्ण का अलौकिक चरित वैष्णव भक्तों का आलम्बन है। इस खण्ड में दशम स्कन्ध के समान कृष्ण चरित पूर्णतया वर्णित है, परन्तु इसका विस्तार कम है। षष्ठ अंश केवल आठ अध्यायों का है। जिसमें प्रलय तथा भक्ति का विशेष रूप से विवेचन किया गया है।

साहित्यिक दृष्टि से यह पुराण बड़ा ही रमणीय, सरस तथा सुन्दर है। इसके चतुर्थ अंश में प्राचीन सुष्ठु गद्य की झलक देखने को मिलती है। ज्ञान के साथ भक्ति का सामन्जस्य इस पुराण में बड़ी ही सुन्दरता के साथ दिखलाया गया है। विष्णु की प्रधान रूप से उपासना होने पर भी साम्प्रदायिक संकीर्णता का लेश भी नहीं है। भगवान् कृष्ण ने स्वयं शिव के साथ अपनी अभिन्नता प्रकट की है -

योऽहं स त्वं जगच्चेदं स देवा सुरमानुषम्।
मन्त्रां नान्यदशेषं यत्, तत्वं तिज्ञातुमिहार्हसि।।
अविद्या मोहितात्मानः पुरूषाः भिनदर्शिनः।
वदन्ति भेद पश्यन्ति, चावयोरन्तरं हर।। (विष्णु. 5-33-48, 49)

सुन्दर भाषण के लाभ का यह कितना अच्छा वर्णन है -

हितं मितं, प्रियं काले वश्यात्मा योऽमिभाषते।

स याति लोका नाह्नादहेतुभूतान् नृपासयान्।। इत्यादि।

NOTES

विष्णु पुराण के पाठ्यांश (प्रथम अंश के 1 से 5 अध्याय) का सारांश :-

विष्णु पुराण का शुभारंभ पराशर तथा मैत्रेय के सम्वाद (प्रश्नोत्तर) से होता है। मैत्रेय नामक महात्मा ब्रहमर्षि वशिष्ठ के पौत्र महर्षि पराशर से सृष्टि के गूढ़ रहस्य तथा उसकी प्रक्रिया को जानने की प्रार्थना करते हैं। श्री पराशर मुनि प्रसन्न होकर बताते हैं कि मेरे पिता को (शक्ति) विश्यवमित्र की प्रेरणा से भक्षण करने वाले राक्षस तथा राक्षस कुल को समाप्त करने के लिए मैंने एक यज्ञ का आयोजन किया जिसमें राक्षसों की मन्त्र बल से आहुतियां दी जानी थीं, तभी मेरे पितामह वशिष्ठ प्रकट होकर मुझे उस कार्य से विरत होने का निर्देश करते हैं तथा क्रोध को त्यागने की सलाह देते है। उसी समय ब्रहमा जी के पुत्र पुलस्त्य मुनि वहां आ जाते हैं तथा वे मुझे आशीर्वाद देते हैं कि तुम समस्त शास्त्रों के ज्ञाता बनों तथा पुराण संहिता के रचयिता बनो इतना ही नहीं तुम देवताओं के वास्तविक रहस्य को यथावत् जानोगे।

वैरं महति मद्वाक्याद् गुरोरस्याश्रिता क्षमा।

त्वया तस्मात् समस्तानि भवान् शास्त्राणि वेत्स्यति।।

पुराण संहिताकर्ता भवान् वत्स भविष्यसि।

देवता पारभार्थञ्च यथावद् वेत्स्यते भवान्।। (विष्णु पु. 01-28-30)

हे मैत्रेय ! तुम्हारे प्रश्न से मुझे उस आशीर्वाद के फलस्वरूप सब कुछ स्मरण हो आया है सुनो -

पुरा दक्ष आदि मुनि श्रेष्ठों के प्रश्न करने पर मेरे पितामह ब्रहमा जी ने जो उनसे कहा था वह मैं आपको सुनाता हूं। उस प्रसंग को मुनियों ने राजा पुरूकुत्स को, राजा पुरूकुत्स ने सारस्वत को तथा सारस्वत ने मुझे कहा था -

NOTES

प्रकृति से भी परे परम श्रेष्ठ परमात्मा में ही सम्पूर्ण सृष्टि अन्तर्निहित है। उसी में सभी का वास है अतएव लोग उसे वासुदेव कहते हैं। सृष्टि के पूर्व में उसके सिवा कुछ भी नहीं था। उस समय न दिन था, न रात थी, न आकाश था, न पृथ्वी थी, न अन्धकार था, न प्रकाश था और कुछ भी नहीं था, केवल श्रवण आदि इन्द्रियों से एवं बुद्धि आदि से भी अप्राप्य एक परम ब्रहमस्वरूप पुरूष ही था।

नाहो न रात्रिर्न नमो न भूमि-

नीसीत् तो ज्योतिरभून्न चान्यत्।

श्रोतादिबुध्यानुपलभ्यमेकं

प्रधानिकं ब्रहम पुमांस्त दासीत्।। (विष्णु पु. 02-23)

श्री विष्णु के उपाधि रहित स्वरूप से प्रधान तथा पुरूष ये दो रूप प्रकट होते हैं। पुनः श्री हरि उन दोनों रूपों में प्रवेश कर उन्हें संक्षोभित किया। सृष्टि के प्रारंभकाल होने पर साम्यावस्थास्वरूप प्रधान श्री विष्णु के क्षेत्रज्ञरूप से अधिष्ठित होने पर उससे महत्तत्व की उत्पत्ति होती है। महत्तत्व को प्रधान तत्व आवृत कर लेता है जिससे सात्विक, राजस तथा तामस भेद से महत्तत्व विविध हो जाता है। पश्चात् त्रिविध (सात्विक, राजस, तामस) अहंकार उत्पन्न होता है। यह त्रिगुणात्मक होने के कारण तामस अहंकार ने विकृत होकर शब्द तन्मात्रा तथा शब्द गुण वाले आकाश की सृष्टि की। आकाश ने विकृत होकर स्पर्श-तन्मात्रा की रचना की। उससे बलवान् वायु उत्पन्न हुआ। पुनः आकाश ने वायु को आवृत किया। वायु विकृत होकर रुप तन्मात्रा की रचना करता है। वायु से तेज तथा तेज से रस एवं रस तन्मात्रा से जल की उत्पत्ति होती है। जल से गन्ध तन्मात्रा एवं उससे पृथिवी की उत्पत्ति हुई। इस प्रकार तामस अहंकार से भूत तन्मात्रा रूप सृष्टि की उत्पत्ति हुई। इन्द्रियां तेजस (राजस अहंकार) से और उनके अधिष्ठाता दश देवता वैकारिक (सात्विक) अहंकार से उत्पन्न हुए।

उपरोक्त समस्त तत्व एक दूसरे का संयोग प्राप्त करके अण्ड का रूप लिया। जल पर स्थित अण्ड ब्रहम (हिरण्य गर्भ) श्री विष्णु भगवान का उत्तम स्थान हुआ। वहां पर विष्णु ही अव्यक्त रूप से तथा हिरण्यगर्भ व्यक्त रूप से विराजित हुए। अनन्तर उस अण्ड में पर्वत, द्वीप, ग्रहों के साथ सम्पूर्ण लोक और देव असुर मानव आदि अनेक प्राणी प्रगट हुए। उस अण्ड में स्थित स्वयं विश्वेश्वर

विष्णु ने तेजोगुणयुक्त ब्रहमा होकर इस जगत् की रचना की। इस प्रकार किरण्यगर्भ ब्रहमा के रूप में सृष्टि की रचना, विष्णु के रूप में भूतों का रक्षण तथा कल्पान्त में भूतों का भक्षण/संहार भी करते हैं

NOTES

तृतीय अध्याय में ब्रहमा की सृष्टि उत्पन्न करने वाली शक्ति का वर्णन तथा उनकी आयु का निरूपण किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में कल्पान्त में सृष्टि की प्रक्रिया का मनोरम निरूपण किया गया है। जो इस प्रकार है :-

कल्प की समाप्ति होने पर रात्रि में शयन कर जागने के बाद सत्वगुण की वृद्धि से युक्त ब्रहमा जी ने सम्पूर्ण लोकों का शून्य देखा। समस्त जगत् के जल भय हो जाने पर पृथ्वी जल के अन्दर है ऐसा विचार कर एक दूसरा शरीर (वराह) धारण करके जल में प्रवेश करते हैं। पृथ्वी ने ब्रहमा की स्तुति की वाराह भगवान् पृथ्वी के जल से बाहर लाते हैं तथा जल के ऊपर स्थित करते हैं। तथा उसे पूर्व की ही भांति वनो, पर्वतो, द्वीपों वाली बना देते हैं। पुनः चतुर्मुख ब्रहमा के रूप में सृष्टि की रचना करते हैं।

पंचम अध्याय में अविद्यादि विविध सर्गों का वर्णन किया गया है। जो इस प्रकार है -

कल्प के आरम्भ में पूर्णकल्प की ही भांति ब्रहमा जी के सृष्टि का विचार करने पर बुद्धि रहित तमोगुणी सृष्टि का प्रादुर्भाव हुआ। ब्रहमा से तम (अज्ञान) मोह, महामोह (भोग की इच्छा) तामिस्त (क्रोध) अन्धतामिस्त (अभिनिवेश) ये पांच प्रकार की अविद्यायें उत्पन्न हुई। उनके ध्यान करने पर ज्ञानरहित बाहर और भीतर से अज्ञान युक्त एवं जड़रूप नगादि (वृक्ष, गुल्म, लता, विरुत, तृण) आदि स्वरूप की रचना हुई। अनन्तर तिर्यग् सृष्टि की रचना हुई। ये सभी सृष्टियां अहंकारी, अभिमानी और आन्तरिक ज्ञान वाले, ये सभी एक दूसरे की प्रवृत्ति को नहीं जानने वाले हैं।

उस सृष्टि को असाधन मानकर ब्रहमा जी ने ऊर्ध्व स्रोत नामक सात्विक सर्ग उत्पन्न किया। इसके प्राणी विषय सुख के प्रेमी, बाह्य तथा आन्तरिक दृष्टि वाले और बाहर एवं भीतर के ज्ञान से सम्पन्न हुए। इस तीसरी सृष्टि के उत्पन्न होने पर ब्रहमा जी को सन्तुष्टि हुई यह सृष्टि देवसृष्टि कहलाई

तदनन्तर अर्वाक् स्रोत नामक सर्ग प्रकट हुआ। इनमें सत्व, राजस, तामस की अधिकता या मिश्रण होता है। इसे ही मानुष्रूी सृष्टि कहा गया है।

NOTES

इसी क्रम में भूत सर्ग, इन्द्रिय सर्ग, स्थावर सर्ग, तियग सर्ग, देव सर्ग, मानव सर्ग तथा अनुग्रह सर्ग का सर्जन हुआ।

इसके अलावा मानसी सृष्टि द्वारा प्रकृति के अनेक तत्वों का उपपादन है।

सृष्टि निर्माण की इच्छा रूपी शक्ति से युक्त और सृष्टि की प्रारब्ध शक्ति से प्रेरित वे ब्रहमा जी बार-बार कल्प के प्रारम्भ में इसी प्रकार की सृष्टि करते हैं।

विष्णु पुराण के पाठ्यांश से चयनित महत्वपूर्ण श्लोकों का हिन्दी अनुवाद :-

(1) जितं ते पुण्डरीकाक्षा नमस्ते विश्व भावन।

नमस्तेऽस्तु हृषीकेश महापुरुष पूर्वज।। 1।।

अर्थ- (विष्णु पुराण के प्रथम अंश के प्रथम अध्याय का यह प्रथम श्लोक मंगलाचरयात्मक है।)

हे पुण्डरीकाक्ष ! आपकी जाय हो। हे विश्व के उत्पादकः आपको नमस्कार है। हे ऋषिकेश! हे महापुरुष ! हे पूर्वज ! आपको नमस्कार है।

(2) प्रणम्य विष्णुं विश्वेशं ब्रहमादीन् प्रणिपत्य च।

गुरूं प्रणम्य वक्ष्यामि पुराणं वेदसम्मितम्।। 3।।

अर्थ- विश्व के स्वामी श्री विष्णु, ब्रहमा आदि देव एवं गुरू को प्रणाम करके वेदतुल्य पुराण (विष्णु पुराण) कहता हूँ।

(3) धर्म्याश्च ब्राह्मणा दीनां तथा चाश्रमवासिनाम्द।

श्रोतुभिच्छाम्यहं सर्व त्वत्तो वाशिष्ठ नन्दन।। 14।।

अर्थ- मैत्रेय महर्षि पराशर से कहते हैं- हे गुरूदेव ! पाराशर ! मैनें आपसे ब्राहमणादि चारों वर्णों का एवं ब्रहमचर्य आदि चारों आश्रमों का धर्म ये सारी बाते आपसे सुनना चाहता हूँ।

(4) विष्णोः सकाशात् सम्भूतं जगत् तत्रैव संस्थितम्द।

स्थिति संयमकर्ताऽसौ जगतोऽस्य जगच्च सः।। 35।।

अर्थ यह जगत् विष्णु भगवान् से उत्पन्न हुआ है और उन्हीं में स्थित है तथा विष्णु भगवान् ही इसकी स्थिति एवं लय के कर्ता हैं एवं यह जगत् विष्णु स्वरूप ही है।

NOTES

(5) आधार भूतं विश्वस्याप्यणीयां समणीयसाम्द।

प्रणम्य सर्वभूतस्थमच्युतं पुरूषोत्तमम्द।। (2-5)

अर्थ- मैत्रेय द्वारा सृष्टि प्रक्रिया पूछे जाने पर पराशर विष्णु की स्तुति करते है-

जो विश्व के आधारभूत हैं। अतिसूक्ष्म से सूक्ष्म हैं। सभी प्राणियों में स्थित अविनाशी पुरूषोत्तम है। जो वास्तव में अत्यन्त निर्मल ज्ञान स्वरूप है। उन्हें प्रणाम करके (सृष्टि प्रक्रिया निरूपित करता हूँ।)

(6) पराशरं मुनिवरं कृतपूर्वाहिणक क्रियम्द।

मैत्रेयः परिपप्रच्छ प्रणिपत्याभिवाद्य च ।। (1-5)

अर्थ- महर्षि पराशर जी जब प्रातःकालीन नित्य नियम सम्पादित करके मुक्त हुए तब मैत्रेय नामक ऋषि उन्हें प्रणाम तथा अभिवादन करके (जिज्ञासा की)

(7) सर्वस्थिति विनाशानां जगतोऽस्य जगन्मयः।

मूलभूतो नमस्तस्मै विष्णवे परमात्मने।। (2-4)

अर्थ- जो विश्व रूप भगवान् जगत् की उत्पत्ति, स्थिति एवं विनाश के मूल कारण है। उन परमात्मा श्रीविष्णु को नमस्कार है।

(8) सोऽहमिच्छामि धर्मज्ञ श्रोतुं त्वत्तो यथा जगत्।

बभूव भूयश्च यथा महाभाग भविष्यति।।

अर्थ- मैत्रेय पराशर से कहते हैं- हे ब्रहमन् ! वही (सभी शास्त्रों में कृतपरिश्रम) मैं अब आपसे यह सुनना चाहता हूं कि यह संसार कैसे उत्पन्न हुआ और आगे (दूसरे कल्प में) कैसे होगा।

बताइये।

(9) नाहो न रात्रिर्न नमो न भूमि

नासीत् तमो ज्योतिश्भून्न चान्यत्।

NOTES

श्रोतादि बुध्यानुपलभ्यमेकं

प्रधानिकं ब्रहम पुभांस्तदासीत्।। 2-23।।

अर्थ- पराशर मुनि मैत्रेय को सृष्टि प्रक्रिया के पूर्व की स्थिति पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं- उस समय (प्रलय काल में) न दिन था, न रात थी, न आकाश था, न पृथिवी थी, न अन्धकार था, न प्रकाश था और कुछ भी नहीं था। केवल श्रवण आदि इन्द्रियों से एवं बुद्धि आदि से भी अप्राप्य एक परम ब्रहमस्वरूप पुरुष ही था।

(10) विष्णोः स्वरूपात् परतो हि तेऽन्ये

रूपे प्रधानं पुरुषश्च विप्र।

तस्यैव तेन्येन धृते नियुक्ते

रूपान्तरं यत् तत् द्विज काल संज्ञम्द।। 2-24।।

अर्थ- हे विप्र ! श्री विष्णु के उपाधिरहित स्वरूप से प्रधान और पुरुष ये दो रूप हुए। उसी भगवान् श्री विष्णु के अन्यरूप के द्वारा वे दोनों प्रधान और पुरुष सृष्टि एवं प्रलयकाल में संयुक्त और नियुक्त होते हैं। उसी रूपान्तर का नाम काल है।

(11) यथा सन्निधि मात्रेण गन्धः क्षोभाय जायते।

मनसो नोपकर्तृत्वात् तथासों परमेश्वरः।। 2-30

अर्थ- महर्षि पराशर मैत्रेय को सृष्टि प्रक्रिया समझाते हुए कहते हैं -

जैसे गन्ध अपने सामीप्य मात्र से ही मन को क्षुभित करता है। वैसे ही परमेश्वर भी अपने सामीप्य मात्र से ही प्रधान और पुरुष के प्रेरित करते हैं।

(12) सृष्टि स्थित्यन्तकरणाद् ब्रहमविष्णुशिवात्मिकाम्द।

स संज्ञा यानि भगवानेक एव जनार्दनिः।। (2-64)

अर्थ- महर्षि पराशर मैत्रेय ऋषि से सृष्टि प्रक्रिया के तत्व को समझाते हुए कहते हैं -

भगवान् श्री विष्णु ही ब्रहमा रूप से अपनी ही सृष्टि का निर्माण करते हैं। वही विष्णु रूप से संसार का पालन करते हैं तथा शिव रूप से संहार भी करते हैं। वस्तुत इन तीनों रूप में केवल जनार्दन विष्णु ही हैं।

NOTES

(13) भवन्ति तपतां श्रेष्ठ ! पावकस्य यथोष्णता।

तन्निबोधयथा सर्गे भगवान! सत्प्रवर्तते।। 3-3।।

अर्थ- पराशर मुनि कहते हैं -

हे तपस्वियों में श्रेष्ठ मैत्रेय ! सभी भावों (पदार्थों) की शक्तियां अचिन्त्य ज्ञान के विषय है। अतएव अग्नि की उष्णता के समान ही ब्रहम की सृष्टि रचना की शक्ति की अचिन्त्य है।

(14) स एव सृज्यः स च सर्गकर्ता

स एव पात्यत्ति च पाल्यते च।

ब्रहमाद्यवस्थाभिरशेषमूर्ति

विष्णुर्वरिष्ठो वरदो वरेण्यः।। 2-68।।

अर्थ- (पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, इन्द्रियां और अन्तःकरण आदि यावन्मात्र जगत् हैं वे सब पुरुष (श्री विष्णु) स्वरूप ही है। क्योंकि अविनाशी एवं विश्वरूप श्री विष्णु भगवान् ही अन्तरात्मा है) अतएव सर्वस्वरूप श्रेष्ठ वर देने वाले प्रार्थना के योग्य वही भगवान् श्रीविष्णु ब्रहमा आदि अवस्थाओं से रचने वाले हैं। वे ही रचे जाते हैं, वही पालते हैं, वही पालित होते हैं और संसार को संहार करते हैं एवं स्वयं ही संहृत होते हैं।

(15) ब्रहमा नारायणाख्यो 5सौ बल्पादौ भगवान् यथा।

ससर्ज सर्वभूतानि तदाचक्षव महामुने।। 4-1)

अर्थ- कल्पान्त में सृष्टि की जिज्ञासा से मुनि वरेण्य मैत्रेय महर्षि पराशर से कहते है-

हे महामुने पराशर ! कल्प के आरम्भ में नारायण नामक भगवान् ब्रहमाजी ने जैसे समस्त

भूतों की रचना की वह आप मुझसे कहिये।

NOTES

(16) दंष्ट्राग्रविन्यस्त मशेष मेतद्

भूमण्डलं नाथ विभाव्यते ते।

विगाहतः पद्वनं विलग्नं

सरो जिनी पत्र भिवोढयङ्कम्द।। 4-36।।

अर्थ- (कल्पान्त मतें सृष्टि प्रक्रिया का निरूपण करते हुए वाराह द्वारा जल में डूबी हुई पृथ्वी के उद्धार प्रसंग की चर्चा करते हुए पराशर मैत्रेय से कहते हैं -

हे नाथ ! आपके दांतों पर रखा हुआ यह समस्त भूमण्डल कमलवन को रौंदते हुए गजराज के दांतों में सटे हुए कीचड़युक्त कमल पत्र के समान सुशोभित होता है।

(17) द्यावापृथिव्योरतुल प्रभावे

यदन्तरं तद् वपुषा तवैव।

व्याप्तं जगद्व्याप्ति समर्थदीप्ते

हिताय विश्वस्य विभो भव त्वम्द।। 4-37।।

अर्थ- हे अतुल प्रभावशाली प्रभो ! पृथ्वी और आकाश के बीच में जितना अन्तर है, वह आपके ही शरीर से ही व्याप्त है। विश्व को व्याप्त करने में समर्थ तेजस्वी प्रभो ! आप विश्व का कल्याण करें।

(18) यद्गुणं यत्स्वरूपं च यत्स्वभावं जगद्विज।

सर्गादों सृष्टवान् ब्रहमा तन्मभाचक्ष्व तत्वतः।। 5-02।।

अर्थ- (अविद्यादि विविध सर्गों की जिज्ञासा से महर्षि मैत्रेय पराशर मुनि से पूछते हैं-)

(सृष्टि के आरंभ में भगवान श्री ब्रह्मा जी ने पृथिवी आकाश और जल आदि में निवास करने वाले मानव तिर्यक् वृक्ष आदि एवं देवता, ऋषि पितृगण और दानवों की जिस प्रकार रचना की, अर्थ च जिस प्रकार के गुण स्वभाव और रूप वाले जगत् की रचना की वह

सभी आप मुझसे कहिये।

(19) इत्येते कथिताः सर्गाः षडत्र मुनिसत्तम।

प्रथमो महतः सर्गो विज्ञेयो ब्राहमणस्तु सः।। (5-18)

NOTES

अर्थ- पराशर मुनि मैत्रेय का अविद्यादि सृष्टि रचना पर प्रकाश डालते हुए कहते है-

हे मुनि श्रेष्ठ ! इस क्रम से मैंने अब तक छः प्रकार की सृष्टि बतलाई। उनमें महत्तत्व की सृष्टि ब्रहमा जी की पहली सृष्टि जानना चाहिये।

(20) तन्मात्राणां द्वितीयश्च भूतसर्गस्तु स स्मृतः।

वैकारिकस्तृतीयस्तु सर्ग ऐन्द्रियकः स्मृतः।। (5-19)

अर्थ- दूसरी तन्मात्राओं की सृष्टि है। उसे भूतसर्ग भी कहा जाता है और वैकारिक नामवाली तीसरी सृष्टि इन्द्रिय सम्बन्धी कही गयी है।

(21) इत्येष प्राकृतः सर्गः सम्भूतो बुद्धि पूर्वकः।

मुख्य सर्गश्चतुर्थस्तु मुख्या वै स्थावराः स्मृताः।। 5-20।।

अर्थ- इस प्रकार बुद्धि पूर्वक उत्पन्न हुए इन तीनों का नाम प्राकृत सर्ग हुआ। चौथा मुख्य सर्ग है, जिसके अन्तर्गत स्थावर पर्वत वृक्ष आदि कहे गये है।

(22) तियक्स्रोतास्तु य प्रोक्तस्तैयर्थवयोन्यः स उच्यते।

ऊर्ध्व स्रोतास्ततः षष्ठो देवसर्गस्तु स स्मृतः।। 5-21।।

अर्थ- पांचवा जो तिर्यग् स्रोत कहा गया है, वह तिर्यग्योनि भी कहा जाता है और छठवां ऊर्ध्वस्रोतों का है जो देव सर्ग कहलाता है।

(23) ततोर्व्वाकस्त्रोतसः सर्गः सप्तमः स तु मानुषः।

अष्टमोऽनुग्रहः सर्गः सात्विक स्तामसश्च सः।। 5-22।।

अर्थ- उसके बाद सातवां सर्ग अर्वाक् स्रोतो की जो सृष्टि कही गयी है वह मानवी सृष्टि है। सात्विक और तामस गुण मिला हुआ आठवां अनुग्रह नाम का सर्ग है।

NOTES

(24) पंचैते वैकृताः सर्गाः प्राकृतास्तु त्रयः स्मृताः।

प्राकृतो वैकृताश्चैव कौमारो नवमः स्मृतः।। 5-23

अर्थ- इनमें पांच वैकृतसर्ग और तीन प्राकृतसर्ग कहे गये हैं। प्राकृत और वैकृत मिला हुआ नवां कौमार सर्ग है। इस प्रकार नव प्रकार की सृष्टि कही गयी है।

(25) करोत्येवं विधां सृष्टिं कल्पादौ स पुनः पुनः।

सिसृक्षाशक्ति युक्तो 5सौ सृज्य शक्ति प्रचोदितः।। 5-65

अर्थ- महर्षि पराशर मैत्रेय के सृष्टि प्रक्रिया निरूपण करते हुए बताते हैं दे मैत्रेय ! सृष्टि निर्माण की इच्छा रूपी शक्ति से युक्त होकर तथा सृष्टि की प्रारब्ध शक्ति से प्रेरित होकर ब्रहमा जी कल्प के आरम्भ में इसी प्रकार सृष्टि करते है।

सहायक ग्रन्थ सूची

1. पुराण विमर्श - बल्देव उपाध्याय
2. महाभारत - वेदव्यास (गीताप्रेस गोरखपुर)
3. संस्कृत साहित्य का इतिहास - बल्देव उपाध्याय
4. संस्कृत साहित्य का इतिहास - कपिल देव द्विवेदी
5. श्रीमद् बाल्मीकि रामायण -
6. ब्रहम पुराण -
7. पद्म पुराण -
8. विष्णु पुराण -
9. वायु पुराण -
10. श्रीमद्भागवत पुराण -
11. नारदीय पुराण -
12. मार्कण्डेय पुराण -
13. अग्नि पुराण -
14. भविष्य पुराण -
15. ब्रहम वैवर्त पुराण -
16. लिंग पुराण -
17. वराह पुराण -
18. स्कन्द पुराण -
19. वामन पुराण -
20. कूर्म पुराण -
21. मत्स्य पुराण -
22. गरूड़ पुराण -
23. ब्रहमाण्ड पुराण आदि।

NOTES